वर्ष : 01 अंक : 02 जनवरी-फरवरी-मार्च-2025

पर्यावरण चेतना

A Sawen group quarterly in-house bilingual magazine. Not for sale.

ठोस अपशिष्ट प्रबंधन एक जटिल चुनौती

जल का चिंतन और मंथन

सतत विकास आज के समय की जरूरत

THE HIMALAYAN BLUNDER

घटते वेटलैंड्स खतरे की घंटी

वृक्ष धरा का भूषण
दूर करे ये प्रदूषण

एक पेड़ माँ के नाम

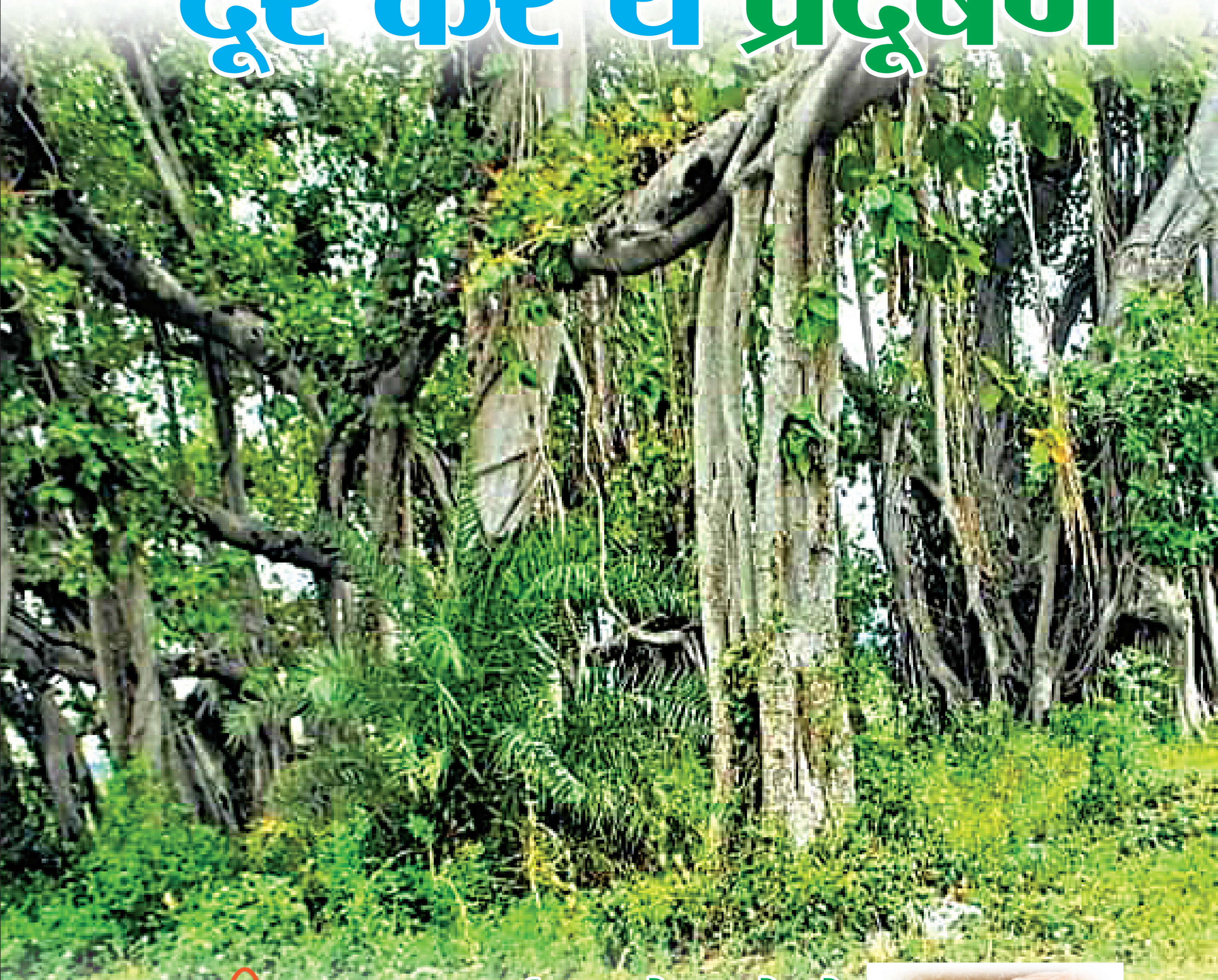

सावन पर्यावरण चेतना फेडरेशन
द्वारा जनहित में जारी

spcflucknow@gmail.com

वर्ष : 01 अंक : 02 जनवरी-फरवरी-मार्च-2025

पर्यावरण चेतना

A Sawen group quarterly in-house bilingual magazine. Not for sale.

प्रधान संपादक
डॉ. आर.के. सिंह

संपादक
अखिलेश कुमार सिंह*
(उर्फ अखिलेश मयंक)

लेआउट एवं डिजाइन
शालिनी सिंह

पंजीकृत कार्यालय
सावन पर्यावरण चेतना फेडरेशन
125, ग्राउंड फ्लोर,
सहारा शॉपिंग सेंटर
अयोध्या रोड, लखनऊ-226016
फोन : 7379444471, 8400645735
E-mail: spcflucknow@gmail.com

संपादकीय एवं पत्र-व्यवहार कार्यालय
सावन पर्यावरण चेतना फेडरेशन
125, ग्राउंड फ्लोर,
सहारा शॉपिंग सेंटर
अयोध्या रोड, लखनऊ-226016
फोन : 7379444471, 8400645735

* मैगजीन में प्रकाशित सभी सामग्रियों के चयन के लिए पूर्णरूपेण उत्तरदायी।

किसी भी विवाद की स्थिति में न्यायिक क्षेत्र लखनऊ होगा।

घटते वेटलैंड्स खतरे की घंटी

दुनिया में वेटलैंड अर्थात आर्द्रभूमि का रकबा लगातार घटता जा रहा है। यह बहुत खतरा है। पढ़ें आवरण कथा। 07

जल का चिंतन और मंथन

जल ही जीवन है, यह सूक्ति हम बचपन से सुनते आ रहे हैं। यह चिंता की बात है कि आज के समय में जल पर बहुत बड़ा संकट है। यह न केवल मनुष्य बल्कि समूची मानवता के लिए खतरा है। 11

बेलगाम हुआ भूजल दोहन घटती गई उपलब्धता

खेती, उद्योग, बिजली उत्पादन, भवन निर्माण और घरेलू उपयोग में भूजल के अन्धाधुंध दोहन से जल की मांग और आपूर्ति के बीच भारी अंतर आने का पूरा खतरा है, जिसकी भरपाई मौजूदा कोशिशों से मुश्किल ही नहीं बल्कि नामुमकिन दिख रही है। 20

THE HIMALAYAN BLUNDER

The Indian Himalayan Range (IHR) had a decadal urban growth rate of more than 40% from 2011 to 2021. 31

संपादकीय

चुनावी घोषणा पत्रों में पर्यावरण क्यों नहीं ?

पिछले दिनों कई राज्यों में विधानसभा चुनाव हुए। अलग-अलग राज्यों में अलग-अलग पार्टियों ने अपने चुनाव घोषणापत्र जारी किए। इन घोषणापत्रों में तमाम मुद्दों का जिक्र और चर्चा हुई लेकिन किसी पार्टी के घोषणापत्र में पर्यावरण या पर्यावरण का संरक्षण कोई मुद्दा नहीं रहा। न ही किसी पार्टी ने जलवायु परिवर्तन की चुनौतियों से कैसे निपटा जाएगा, इस पर बात की। कुल मिलाकर कह सकते हैं कि पर्यावरण और उसका संरक्षण किसी भी पार्टी के एजेंडे में नहीं रहा। बड़ा सवाल उठता है कि इतने महत्वपूर्ण मुद्दे के प्रति राजनीतिक पार्टियां उदासीन क्यों हैं?

इसका सीधा कारण यह है कि पर्यावरण को हम लोग कोई मुद्दा मानते ही नहीं। तमाम सरकारी-गैरसरकारी प्रयासों के बावजूद इसके प्रति लोगों में जागरूकता बहुत कम है। जहां जागरूकता आ भी रही है, वहां इसकी गति बहुत धीमी है। उधर, राजनीतिक पार्टियां ये देख-समझ रही हैं कि चुनावों के दौरान जब लोकलुभावन नारों और अनुत्पादक मुद्दों को उठाकर जनता के वोट मिल जा रहे हैं, तो पर्यावरण की चिंता करने की क्या जरूरत है? इसलिए वे इस मुद्दे को अपने एजेंडे में रखतीं ही नहीं।

दरअसल पर्यावरण समस्याओं को न कोई चुनौती मानता है और न ही इसके प्रति अपनी कोई जवाबदेही। यह स्थिति टॉप-टू-बॉटम अर्थात ऊपर से नीचे तक है। चाहे अजरबैजान के बाकू में अंतरराष्ट्रीय स्तर के सम्मेलन कॉप-29 में जुटे दुनिया के बड़े-बड़े देश हों, चाहे किसी राज्य के प्रदूषण नियंत्रण बोर्ड हों, चाहे जिले का नगर निगम या दूसरे नगर निकाय, हर किसी का रवैया चलताऊ ही है। कॉप-29 सम्मेलन में विकसित देशों ने जिस तरह अपनी जिम्मेवारियों से पल्ला झाड़ा, वह निहायत चिंताजनक है। इसी तरह, अमेरिकी प्रेसीडेंट डोनाल्ड ट्रंप ने दूसरी बार राष्ट्रपति पद की शपथ लेने के बाद पहले दिन अपने ओवल आफिस से जो महत्वपूर्ण आदेश जारी किए, उसमें से एक आदेश पेरिस जलवायु संधि से अमेरिका के हटने का भी था, जो बेहद दुर्भाग्यपूर्ण होने के साथ-साथ पर्यावरण-न्याय सिद्धांत के विरुद्ध भी है। जबकि कार्बन उत्सर्जन के मामले में अमेरिका का स्थान चीन के बाद दूसरे नंबर पर है। सच्चाई यह है कि पृथ्वी पर सबसे अधिक कार्बन उत्सर्जन यही विकसित देश कर रहे हैं। लेकिन इनमें इसका न कोई अपराधबोध है, न ही ये इस स्थिति को सुधारने के लिए कोई प्रयास करना चाहते हैं। उल्टे ये अपनी हरकतों से बार-बार यह जताते रहते हैं कि हम पर्यावरण जैसे महत्वपूर्ण अंतरराष्ट्रीय मसले को अपने ठेंगे पर रखते हैं। अब जब ऊपर के लोग खराब होंगे, तो नीचे के लोगों के अच्छे होने की उम्मीद कैसे की जा सकती है? इसीलिए हर कोई अपना दोष दूसरे के सिर पर मढ़कर खुद को जिम्मेवारी से मुक्त समझ रहा है।

ऐसे में समाज के प्रतिष्ठित लोगों और लोगों के बीच काम कर रहे स्वयंसेवी संगठनों की जिम्मेवारी बढ़ जाती है। यही हैं, जो समाज को पर्यावरण संरक्षण के प्रति जाग्रत कर सकते हैं। जिस दिन जनता नेताओं को रोककर पर्यावरण से जुड़ी परेशानियों पर उनका दृष्टिकोण पूछने लगेगी (जैसे कि, बताइए हमारे क्षेत्र का एएक्यूआई (वायु गुणवत्ता सूचकांक) इतना अधिक क्यों है? चुनाव जीतने के बाद इसे ठीक करने के लिए आप क्या करेंगे), उसी दिन राजनीतिक पार्टियां इस मामले के प्रति संवेदनशील हो जाएंगी। लेकिन अगर हम पर्यावरण की चुनौतियों के प्रति इसी तरह 'मूंदहु आंख कतहुं कछु नाहीं' वाला रवैया अपनाते रहे, तो आने वाली पीढ़ियां हमें कभी माफ नहीं करेंगी।

(अखिलेश मयंक)

अगर अभी भी नहीं चेते तो हो जाएगी बहुत देर

त्रैमासिक पत्रिका पर्यावरण चेतना का पहला अंक (जुलाई-सितंबर) निकला है। यह पत्रिका कई मामलों में एक विशिष्ट पत्रिका कही जा सकती है। सच्चाई यह है कि पूरे विश्व को निरंतर प्रभावित करनेवाले तत्व पर्यावरण असंतुलन और उससे संबंधित चिंताजनक पहलुओं को हम बहुत हल्के में लेते हैं। न जाने क्यों हम जनजीवन के लिए बहुत महत्वपूर्ण विषय पर्यावरण संरक्षण की घोर अवहेलना किए जा रहे हैं। पर्यावरण पर व्यापक एवं गंभीर विमर्श नहीं हो रहा है। समाज में पर्यावरण संकट और संरक्षण के विषय में जागरूकता का स्तर नगण्य सा है। प्रकृति से हम कितना कुछ पाते और लेते हैं लेकिन उसके संरक्षण व विकास के लिए न तो सजग हैं और न ही प्रयास करते हैं। मुझे लगता है कि पर्यावरण संबंधी लेखन के प्रति पाठकीय ध्यान भी बहुत कम जाता है।

ऐसी स्थिति में पर्यावरण को पूर्णरूपेण समर्पित पत्रिका का प्रकाशन एक बड़े सामाजिक दायित्व का काम तो है, साथ ही यह बहुत साहस और जोखिम से भी भरा कदम है। इसके लिए संपादक अखिलेश मयंक सराहना व बधाई के पात्र हैं।

पर्यावरण चेतना पत्रिका की दूसरी बड़ी विशेषता यह है कि इसमें प्रस्तुत सामग्री के सभी लेखक पर्यावरण विशेषज्ञ हैं। यह पत्रिका में प्रकाशित

सामग्री की गहनता, प्रामाणिकता और महत्ता को दर्शाता है। पत्रिका द्विभाषिक (हिन्दी-अंग्रेजी में) है। पर्यावरण एक तकनीकी विषय है लेकिन

पत्रिका में समाहित सामग्री बड़े ही सरल एवं बोधगम्य ढंग से प्रस्तुत की गई है। अत्यंत गहन और तकनीकी विषय पर केंद्रित होने के बावजूद पत्रिका में किड्स कार्नर, क्विज कार्नर व नन्ही कूंची देखकर अच्छा लगा।

वैसे तो पत्रिका में प्रस्तुत पूरी सामग्री जानकारीपूर्ण, प्रेरक एवं सचेत करनेवाली है पर 'जल्दी से जल्दी अपनी जड़ों की तरफ लौटना होगा हमें' शीर्षक से लिखा गया अखिलेश मयंक का संपादकीय बहुत सारगर्भित और प्रासंगिक लगा। राजन सिंह कलहंस, मयंक की आवरण कथा, प्रो. वेंकटेश दत्ता, डॉ यशपाल सिंह के लेख और डॉ आर के सिंह से साक्षात्कार पाठक को पर्यावरण के विभिन्न आयामों की जानकारी तो देते ही हैं, साथ ही पर्यावरण के प्रति संवेदनशील, सजग व सक्रिय होने की प्रेरणा भी देते हैं।

संपादकीय में बताया गया है कि पर्यावरण चेतना पत्रिका अभी गृह पत्रिका के रूप में निकाली गई है पर शीघ्र ही बिक्री के लिए उपलब्ध कराई जाएगी। आक्रामक डिजिटल संप्रेषण के इस दौर में पत्रिका निकालना, वह भी पर्यावरण को समर्पित, सामाजिक दायित्व निर्वाह की संपादक व प्रबंधन की ललक और साहस को रेखांकित करता है। संपादक अखिलेश मयंक को हार्दिक बधाई देते हुए कामना है कि यह पत्रिका पर्यावरण के परिप्रेक्ष्य में तथ्य प्रसार, जन जागरण और प्रेरणा के माध्यम से अपनी हस्तक्षेपकारी भूमिका का निरंतर निर्वाह करती रहे।

- सी.पी. सिंह, लखनऊ

एक शानदार पर्यावरण पत्रिका

सावन पर्यावरण चेतना का प्रवेशांक देखकर मन प्रफुल्लित हो उठा। आपने महाप्रलय की आहट शीर्षक कवर स्टोरी में बहुत सामयिक प्रश्न उठाए हैं। हम अभी भी समय रहते नहीं सुधरे तो वास्तव में बहुत देर हो चुकी होगी।

संपादकीय जागरूकता का संदेश देने में सफल रहा है। सचमुच हमें अपनी जड़ों की तरफ लौटना ही होगा। पर्यावरणविद् डॉ. आरके सिंह के साक्षात्कार में बहुत मौजूं सवाल-जवाब हैं। ऐसे पर्यावरणविदों के मूल्यवान विचार हमारे बीच आने ही चाहिए, ताकि हम उससे लाभान्वित हो सकें। आप पर्यावरणविदों के साक्षात्कार की एक सीरीज चलाने पर विचार कर सकते हैं। कुल मिलाकर आपका प्रवेशांक शानदार है।

-रत्ना श्रीवास्तव, लखनऊ

यही है असली समाजसेवा

सावन पर्यावरण चेतना का पहला अंक ताजगी से भरपूर है। सोनभद्र जिले की प्रदूषण की भयावह स्थिति को उजागर करके आपने एक उपकार वाला काम किया है।

यह पत्रिका गंभीर विषयों से लेकर बालोपयोगी सामग्री भी दे रही है, यह बहुत बड़ी बात है। पर्यावरण संरक्षण का संदेश अगर हम बच्चों तक पहुंचाने में सफल रहे, तो यह असली समाजसेवा होगी।

-इंद्रमणि, गोरखपुर

पठनीय और संग्रहणीय अंक

आपकी पत्रिका पढ़ी। अद्भुत! इस पहले अंक में छपे सभी आलेख पठनीय हैं।

संपूर्णता में यह अंक संग्रहणीय है। पर्यावरण पर एक बेहतरीन पत्रिका निकालकर आपने एक बहुत बड़ा रिक्त स्थान भरने की कोशिश की है। पर्यावरण के क्षेत्र में बहुत कम पत्रिकाएं निकल रही हैं। आप निश्चित रूप से एक बड़े उद्देश्य को लेकर चल रहे हैं। आप और आपकी टीम अपनी कोशिश में कामयाब हों। पत्रिका को समाज और पाठकों के बीच में वह स्थान हासिल हो, जिसकी वह हकदार है, ऐसी मेरी शुभकामना है।

-अनूप मिश्र, लखनऊ

आप अपने पत्र हमें निम्न ई-मेल पते पर भेजें-
spcflucknow@gmail.com
आप अपने पत्र इस नंबर पर व्हाट्सऐप पर भी भेज सकते हैं- 8400645735

फर्स्ट कॉलम

ठोस अपशिष्ट प्रबंधन: एक जटिल चुनौती

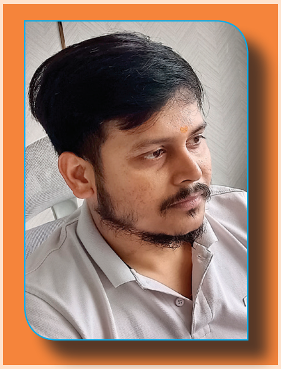

राजन सिंह कलहंस

शहरीकरण, आर्थिक विकास, और औद्योगीकरण में निरंतर वृद्धि के कारण ठोस अपशिष्ट उत्पादन आज एक बड़ी वैश्विक समस्या बन गई है। इसका प्रभाव स्थानीय, राष्ट्रीय, और अंतरराष्ट्रीय स्तर पर देखा जा सकता है। विभिन्न देशों के अपशिष्ट उत्पादन में भारी असमानता है। उदाहरण के लिए, अमेरिका में प्रतिदिन लगभग 0.63 मीट्रिक टन ठोस कचरा उत्पन्न होता है, जो इसे इस समस्या में अग्रणी बनाता है। भारत, जो कि 1.38 अरब लोगों का घर है, 0.13 मीट्रिक टन प्रतिदिन के ठोस अपशिष्ट उत्पादन के साथ इस सूची में 5वें स्थान पर है। भारत में प्रतिदिन 91,152 टन कचरा एकत्र किया जाता है, जिसमें से केवल 25,884 टन का ही उपचार किया जाता है।

भारत में जनसंख्या में तेजी से वृद्धि हो रही है, जिसके चलते ठोस अपशिष्ट में हर साल लगभग 5% की वृद्धि हो रही है। यह बढ़ता कचरा न केवल हमारे पर्यावरण बल्कि स्वास्थ्य और संसाधनों के लिए भी गंभीर चुनौती पेश करता है।

कचरा प्रबंधन की मौजूदा स्थिति और चुनौतियां

कचरे को लैंडफिल में जमा करना, जहां इसे गाड़ा या जलाया जाता है, अधिकांश देशों में प्रचलित प्रथा है। हालांकि, यह प्रक्रिया पर्यावरणीय रूप से स्थायी नहीं है। लैंडफिल से निकलने वाले खतरनाक रसायन और गैसें, जैसे मीथेन, पर्यावरणीय प्रदूषण में योगदान देती हैं। इसके अलावा, शहरी क्षेत्रों में बढ़ती जनसंख्या के कारण जमीन की कमी एक और बड़ी समस्या बन गई है।

भारत में, कचरे का पृथक्करण और संग्रहण अक्सर अपर्याप्त होता है। इसके परिणामस्वरूप, अपशिष्ट उपचार के लिए आवश्यक बुनियादी ढांचे का अभाव रहता है। कचरे को खुले में जला दिया जाता है, जो संसाधनों की हानि और वायु प्रदूषण का कारण बनता है। देश में उत्पादित कुल ठोस कचरे में से केवल 10% को खाद में परिवर्तित किया जाता है, जबकि 75% लैंडफिल में चला जाता है।

लैंडफिल खनन: एक नवाचारपूर्ण दृष्टिकोण

ऑक्सफोर्ड शब्दकोश के अनुसार, लैंडफिल का अर्थ है ऐसी प्रक्रिया जिसमें कचरे को जमीन में गाड़कर जमा किया जाता है। लैंडफिल खनन के माध्यम से इन कचरों में छुपे प्राकृतिक संसाधनों, जैसे धातु, प्लास्टिक, और कांच को पुनः प्राप्त किया जा सकता है। यह दृष्टिकोण न केवल पर्यावरण को साफ करने में मदद करता है बल्कि आर्थिक दृष्टिकोण से भी लाभकारी है।

लैंडफिल खनन में निर्माण अपशिष्ट को पृथक किया जाता है। धातुओं को पुनः चक्रित किया जा सकता है, और जैविक सामग्री का उपयोग उर्वरक के रूप में किया जा सकता है। उच्च कैलोरी सामग्री वाले कचरे का उपयोग ऊर्जा उत्पादन के लिए किया जा सकता है।

बायोमाइनिंग और बायोरेमेडिएशन

विरासत कचरे के उपचार के लिए बायोमाइनिंग और बायोरेमेडिएशन जैसी प्रक्रियाओं का उपयोग किया जाता है। इन तकनीकों में कचरे को स्थिर करने और मीथेन जैसी खतरनाक गैसों को निकालने पर ध्यान केंद्रित किया जाता है। कचरे को हवा में सुखाकर और जैविक सामग्री को विघटित करके गंध और लीचेट को खत्म किया जाता है।

स्थिरीकरण प्रक्रिया में, अपघटन को तेज करने के लिए जैव-संस्कृति को जोड़ा जाता है। सूखे और स्थिर कचरे को स्क्रीनिंग मशीनों में डाला जाता है, जहां इसे विभिन्न आकारों में पृथक किया जाता है। इस प्रक्रिया से प्राप्त खाद का उपयोग कृषि में किया जा सकता है, जबकि ऊर्जा उत्पादन के लिए उच्च कैलोरी सामग्री वाले भागों का उपयोग किया जाता है।

अपशिष्ट प्रसंस्करण की प्रक्रियाएं

ठोस कचरे के उपचार के लिए विभिन्न चरणों का पालन किया जाता है:

1. **एमएसडब्ल्यू का वजन और निरीक्षण:** अपशिष्ट में वांछनीय सामग्री की जांच की जाती है।
2. **नमी में कमी:** ताजे कचरे को सुखाकर नमी को हटाया जाता है।
3. **यांत्रिक पृथक्करण:** सूखे कचरे को पूर्व प्रसंस्करण के लिए अलग किया जाता है।
4. **विंडरो कंपोस्टिंग:** जैविक सामग्री को एरोबिक प्रक्रियाओं के माध्यम से खाद में परिवर्तित किया जाता है।
5. **क्यूरिंग:** कचरे को परिपक्व होने के लिए छोड़ दिया जाता है।
6. **रेफाइनमेंट:** तैयार खाद को स्क्रीनिंग के बाद उर्वरक या अन्य उपयोगों के लिए तैयार किया जाता है।

लैंडफिल रिक्लेमेशन के लाभ

लैंडफिल रिक्लेमेशन का उद्देश्य कचरे से संसाधनों को पुनः प्राप्त करना और भूमि को उपयोगी बनाना है। यह प्रक्रिया पर्यावरणीय, आर्थिक, और सामाजिक दृष्टिकोण से कई लाभ प्रदान करती है।

भूमि की उपलब्धता बढ़ाना: लैंडफिल रिक्लेमेशन के बाद पुनः प्राप्त की गई भूमि का उपयोग आवास, कृषि, या उद्योगों के लिए किया जा सकता है।

प्राकृतिक संसाधनों का संरक्षण: पुनर्चक्रण के माध्यम से कचरे में छुपे कीमती संसाधनों को बचाया जा सकता है।

ऊर्जा उत्पादन: उच्च कैलोरी सामग्री वाले कचरे का उपयोग ऊर्जा उत्पादन के लिए किया जा सकता है।

पर्यावरणीय सुधार: इस प्रक्रिया से भूमि, जल, और वायु प्रदूषण को कम किया जा सकता है।

भारत में ठोस अपशिष्ट प्रबंधन एक महत्वपूर्ण चुनौती है, लेकिन सही तकनीकों और दृष्टिकोणों को अपनाकर इसे अवसर में बदला जा सकता है। लैंडफिल खनन, बायोमाइनिंग, और अपशिष्ट प्रसंस्करण जैसी प्रक्रियाएं न केवल पर्यावरणीय समस्याओं को हल करने में मदद करेंगी, बल्कि संसाधनों का कुशल उपयोग सुनिश्चित करेंगी। ठोस अपशिष्ट प्रबंधन के लिए सामुदायिक भागीदारी और नीतिगत समर्थन भी उतने ही आवश्यक हैं।

(लेखक पर्यावरण इंजीनियर और आईआईटी रुड़की से परास्नातक हैं।)

आवरण कथा

घटते वेटलैंड्स खतरे की घंटी

अगर इनका संरक्षण नहीं किया गया तो जैवविविधता के नष्ट होने के साथ संकट में पड़ जाएगा मानव जीवन

'वेटलैंड अर्थात आर्द्रभूमि हमारी प्राकृतिक छटा की आत्मा, हमारे जल की छन्नी और जैवविविधता का धड़कता हुआ दिल है।'

वेटलैंड की यह परिभाषा 1971 में ईरान के रामसर शहर में हुए अंतरराष्ट्रीय कन्वेंशन में दी गई थी, जिसके बाद यह शब्द पहली बार तेजी से विश्व फलक पर उभरा। इस सम्मेलन ने वैश्विक स्तर पर इसकी महत्ता प्रतिपादित की, जिसके बाद दुनिया के कई देशों ने वेटलैंड्स के संरक्षण के लिए आवश्यक कानून बनाए या पहले से बने कानूनों में सुधार किए। रामसर कन्वेंशन, वेटलैंड्स के संबंध में एक अंतरराष्ट्रीय संधि है, जो दुनिया को वेटलैंड (आर्द्रभूमि) और उससे जुड़े प्राकृतिक संसाधनों के संरक्षण पर बल देती है। इसका उद्देश्य संधि पर हस्ताक्षर करने वाले सदस्य देशों के बीच इस मुद्दे पर अंतरराष्ट्रीय सहयोग को बढ़ावा देना भी है। वेटलैंड से संबंधित यह संधि जिस तारीख को हुई थी, वह दो फरवरी थी। उसके बाद से हर साल दो फरवरी को विश्व वेटलैंड्स दिवस मनाया जाता है। इस बार हमारी आवरण कथा में वेटलैंड के विभिन्न पहलुओं पर एक नजर डाल रहे हैं - अखिलेश मयंक

आवरण कथा

वेटलैंड अर्थात वह जमीन जो गीली या नम हो या दलदली हो अर्थात आर्द्रभूमि। कहने-सुनने में बहुत सामान्य-सा लगने वाला ये शब्द प्रकृति की जीवनरेखा है। इसे 'प्रकृति का गुर्दा' भी कहा जाता है, क्योंकि ये जल को न केवल छानती है, बल्कि उसकी गुणवत्ता को सुधारती भी है। ये जीवों की उन प्रजातियों की रक्षक है, जो लुप्तप्राय हैं। ये हमारी जलवायु की गुणवत्ता सुधारने के साथ सूखा-बाढ़ की विभीषिका को रोकने और कम करने का काम करती है। वेटलैंड में नदियां, झीलें, ताल-तलैया, पोखरे आदि आते हैं।

आर्द्रभूमि हमारे भूजल को रीचार्ज करने का काम करती है। पारिस्थितिकीय तंत्र के स्वास्थ्य को अच्छा रखती है। आज जबकि यह सिद्ध हो गया है कि जलवायु परिवर्तन के चलते जो आपदाएं आ रही हैं, वे हमारी स्वयं की आमंत्रित हुई हैं, तो लोगों का ध्यान इस तरफ भी गया है कि हमारे यहां आर्द्र-भूमि की संख्या में तेजी से गिरावट आई है। डब्ल्यूडब्ल्यूएफ (वर्ल्डवाइड फंड फार नेचर) के एक आंकड़े के अनुसार पिछले तीन सौ सालों से 2023 तक दुनिया में वेटलैंड का क्षेत्रफल 85 से 87 प्रतिशत घटा है। यह एक भयानक स्थिति है। ऐसे में यह जरूरी हो गया है कि न केवल पुराने सभी वेटलैंड्स का संरक्षण किया जाए, बल्कि नए वेटलैंड्स भी बनाए जाएं। अन्यथा भयंकर गर्मी बढ़ेगी, प्राकृतिक आपदाएं आएंगी, जिनका दर्द हमें झेलना पड़ेगा। यही नहीं, हमारे भूजल का स्तर अगर रसातल में चला गया तो हम पीने के पानी के लिए तरस कर बिना किसी आपदा के ही मर जाएंगे। भारत में वेटलैंड्स घटते ही जा रहे हैं। उनकी जगह कालोनियों और बहुमंजिली इमारतों ने ले ली है। गांवों में तालाब तेजी से समाप्त हो रहे हैं।

03 **गुनी है वेटलैंड्स के खत्म होने की रफ्तार जंगलों के विनाश के मुकाबले में**

87 **प्रतिशत वेटलैंड्स नष्ट हो गए पिछले 300 सालों में**

80 **हजार एकड़ कोस्टल वेटलैंड्स हर साल खत्म हो रहे हैं यूएसए में**

उन पर कब्जे करके लोगों ने अपने घर बना लिए हैं। यह स्थिति बेहद भयावह है। यह और अधिक भयावह है कि वेटलैंड्स जितनी तेजी से कम हो रहे हैं, उसके अनुपात में उसके संरक्षण के उपाय बहुत कम हैं। हमारे सुप्रीम कोर्ट ने इसकी गंभीरता को समझा है, इसलिए उसने सरकारों से कहा है कि यह उनका संवैधानिक कर्तव्य है कि वे तालाबों, झीलों, पोखरों आदि की न केवल सुरक्षा करें बल्कि यदि किसी जगह उन पर कब्जे हो गए हैं, तो उनको मुक्त करवाकर उनकी स्थिति की पुनर्बहाली करें (देखें इनसेट)।

सरकार ने इस दिशा में काम करना शुरू किया है। इसके लिए पर्यावरण, वन एवं जलवायु परिवर्तन मंत्रालय में अलग आर्द्रभूमि विभाग है। आर्द्रभूमि के संरक्षण के प्रति लोगों में चेतना जाग्रत हो, इसके लिए राज्य सरकारों से लेकर अंतरराष्ट्रीय संगठन तक काम कर रहे हैं। इसकी शुरुआत प्रमुख रूप से 1971 के रामसर कन्वेंशन से ही मानी जाती है, जिसका ऊपर विस्तारपूर्वक जिक्र किया गया है।

वेटलैंड के संरक्षण के प्रति संयुक्त राष्ट्र का रुख बेहद सकारात्मक है। इसके प्रति लोगों में जागरूकता बढ़ाने के लिए संयुक्त राष्ट्र महासभा ने एक संकल्प के माध्यम से प्रत्येक वर्ष दो फरवरी को विश्व आर्द्रभूमि दिवस (वेटलैंड डे) मनाने की शुरुआत की है। यह तारीख ईरान के रामसर शहर में संपन्न हुए "अंतरराष्ट्रीय महत्व के आर्द्रभूमि पर सम्मेलन" को अपनाने की याद दिलाती है, जिसको इसी दिन अपनाया गया था। बीते वर्ष 2024 में वर्ल्ड वेटलैंड डे का विषय था-आर्द्रभूमि और मानव कल्याण। इस विषय के माध्यम से लोगों को यह बताने का प्रयास किया गया कि आर्द्रभूमि और मानव जीवन एक-दूसरे से अविछिन्न रूप से जुड़े हुए हैं। इस मौके पर पूरी दुनिया में वेटलैंड संरक्षण के प्रति लोगों में जागरूकता फैलाने के साथ यह बताया गया कि हर व्यक्ति को अपनी आर्द्रभूमियों को संरक्षित करने के साथ उसका बेहतर प्रबंधन करना चाहिए।

हमारी सरकार इस मामले में काम कर रही है। केंद्र सरकार के पर्यावरण, वन एवं जलवायु

भारत में हैं 75 रामसर कॉन्वेंशन साइट्स

केंद्रीय वन पर्यावरण एवं जलवायु पर्यावरण मंत्रालय के अनुसार भारत के पास 1.33 मिलियन हेक्टर में फैला एशिया का सबसे बड़ा रामसर साइट नेटवर्क (वेटलैंड्स एरिया) है। देश में अब तक 75 रामसर कॉन्वेंशन साइट (वेटलैंड) घोषित किए जा चुके हैं, जबकि कुल वेटलैंड्स की संख्या 194 के करीब है।

यूपी में सबसे अधिक रामसर साइट्स

पूरे देश में 48 रामसर साइट्स हैं। इनमें सबसे अधिक उत्तर प्रदेश में हैं। यहां 10 रामसर साइट्स हैं। इनके नाम हैं-

1-बखिरा सैंक्चुअरी (संतकबीर नगर)
2-नवाबगंज बर्ड सैंक्चुअरी (उन्नाव)
3-समन बर्ड सैंक्चुअरी (मैनपुरी)
4-सैंडी बर्ड सैंक्चुअरी (हरदोई)
5-सूर सरोवर (आगरा)
6-हैदरपुर वेटलैंड (मुजफ्फरनगर/बिजनौर)
7-अपर गंगा नहर (हरिद्वार, रुड़की, मेरठ और बुलंदशहर)
8-सरसई नावर झील (इटावा)
9-समसपुर बर्ड सैंक्चुअरी (रायबरेली)
10-पार्वती अरगा बर्ड सैंक्चुअरी (गोण्डा)

परिवर्तन मंत्रालय (एमओईएफसीसी) का आर्द्रभूमि विभाग देश में आर्द्रभूमि (वेटलैंड्स) के संरक्षण और प्रबंधन के लिए नेशनल प्लान फॉर कन्जर्वेशन आफ एक्वाटिक इकोसिस्टम (एनपीसीए) चलाता है। इस योजना में केंद्र और संबंधित प्रदेश/केंद्रशासित प्रदेश की सरकारें सहयोग करती हैं। इसका उद्देश्य वेटलैंड्स के पुराने रूप में बहाली और उसकी जैवविविधता के संरक्षण के साथ-साथ जल की गुणवत्ता और पारिस्थितिकी को बेहतर बनाना भी है। इसका उद्देश्य राज्यों द्वारा चलाए जा रही विकास और प्रबंधन योजनाओं, शोध, सामुदायिक प्रयासों से किए जा रहे विभिन्न कार्यों और नवाचारों में वेटलैंड्स को भी शामिल करवाना है।

एमओईएफसीसी के इस विभाग द्वारा वेटलैंड विकास के संबंध में तमाम गतिविधियां संचालित की जाती हैं। इसमें जल अपशिष्ट को रोकना, उसकी दिशा बदलना और उसे साफ करना शामिल है। इसके अलावा यह विभाग झीलों, तालाबों के किनारों का संरक्षण/विकास, उसकी गाद निकालना, बाढ़ के पानी को संभालने, खरपतवार की सफाई व नियंत्रण, जलीय क्षेत्र का सर्वेक्षण और सीमांकन, संरक्षण के प्राकृतिक उपायों को अपनाने, जलीय क्षेत्रों की सार-संभाल, जैव-विविधिता संरक्षण के साथ-साथ उसके बारे में लोगों को बताने, उनमें जागरूकता पैदा करने और उससे भी बढ़कर इस पूरी प्रक्रिया में अधिक से अधिक लोगों की सहभागिता बढ़ाने के लिए काम करता है।

एनपीसीए के विभिन्न दिशानिर्देशों का उद्देश्य वेटलैंड संरक्षण संबंधी योजनाओं को लागू करने से पहले उनकी तैयारी और उन्हें बेहतर तरीके से प्रस्तुत करने की प्रक्रिया को आसान बनाना है। यह केंद्र और राज्यों के इससे संबंधित प्रोजेक्ट रिपोर्टों और प्रस्तावों को तैयार करने में कारगर तरीके सुझाता है।

एलडीए की सराहनीय पहल 'विहंग उत्सव'

यूपी की राजधानी लखनऊ के अटल बिहारी बाजपेयी इकाना स्टेडियम के पीछे 37 एकड़ की एरिया में एक बेहतरीन वेडलैंड का विकास करके लखनऊ विकास प्राधिकरण (एलडीए) ने पर्यावरण और पक्षी संरक्षण की दिशा में एक महत्वपूर्ण काम किया है। पिछले दिनों एलडीए ने यहां पर 'विहंग उत्सव' का आयोजन किया, जिसमें भारी संख्या में प्रकृति और पक्षी प्रेमी, पर्यावरणविद्, बच्चे और शासन-प्रशासन के अधिकारी शामिल हुए। इन सभी ने वेडलैंड में बर्ड वाचिंग की। इस मौके पर संगोष्ठी के साथ-साथ बच्चों के लिए भाषण, पेंटिंग और क्विज प्रतियोगिता का आयोजन भी हुआ। विहंग उत्सव की शुरुआत मंडलायुक्त डॉ. रोशन जैकब और एलडीए के उपाध्यक्ष प्रथमेश कुमार ने वर्ड वाचिंग करके की। यहां पर बनाए गए वॉच टावर और व्यूइंग डेक से शहर के बहुत से लोगों ने बर्ड वाचिंग की। एलडीए का यह प्रयास सराहनीय है। अगर ऐसे आयोजन समय-समय पर होते रहें तो इससे न केवल लोगों में पर्यावरण संरक्षण का भाव जाग्रत होगा बल्कि बच्चों रूपी नई पौध में तमाम यंग एनवायरमेंटलिस्ट पैदा होंगे, जो आज के समय की सबसे बड़ी आवश्यकता है। इस वेटलैंड का बेहतरीन प्रबंधन हुआ तो यहां न केवल पक्षियों के प्रवास का अच्छा प्रबंधन हो सकेगा बल्कि यह स्थान एक बड़े ईको-टूरिस्ट प्लेस के तौर पर विकसित हो सकेगा। शहर के साथ-साथ आसपास के प्रकृतिप्रेमी यहां खिंचे चले आया करेंगे।

केंद्र सरकार की अमृत सरोवर योजना

वेटलैंड संरक्षण के लिए केंद्र सरकार की अमृत सरोवर योजना आजकल काफी चर्चा में है। आजादी के अमृत महोत्सव के तहत हो रहे कामों में अमृत सरोवर की अवधारणा भी है, जिसमें सरकार ने यह तय किया है कि हर जिले में 75 वाटर बाडीज (आर्द्र भूमि) को पुनर्जीवित करेगी। जबकि उत्तर प्रदेश सरकार ने 2022 में ही तय किया था कि वह हर जिले में एक वेटलैंड बनाएगी। वन विभाग इस दिशा में तेजी से काम कर रहा है।

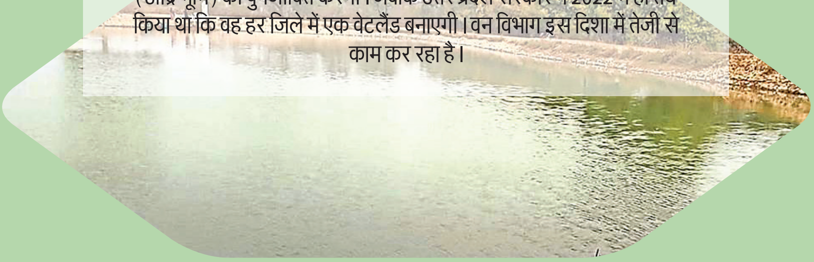

संविधान ने दिया है संरक्षण

भारतीय संविधान का अनुच्छेद 21 हर नागरिक को स्वच्छ और स्वस्थ्य वातावरण में रहने का मौलिक अधिकार देता है। ऐसे में वेटलैंड्स की महता स्वयंसिद्ध है।

क्या कहता है सुप्रीम कोर्ट का निर्देश

केस 1 उत्तर प्रदेश के भदोही जिले के हिंच लाल तिवारी बनाम कमला देवी के मामले में सुप्रीम कोर्ट ने 25 जुलाई, 2001 को अपने आदेश में यह व्यवस्था दी कि यह राज्य का संवैधानिक दायित्व है कि वह तालाब, खलिहान और चारागाह की जमीनों का स्वरूप हर कीमत पर कायम रखे। यदि इस स्वरूप को बदल दिया गया है, तो उसकी पुनर्बहाली करे।

केस 2 पंजाब के पटियाला जिले के जगपाल सिंह और अन्य बनाम पंजाब सरकार के मामले में 28 जनवरी, 2011 को सुप्रीम कोर्ट ने आदेश दिया कि सामुदायिक तालाबों को कोई व्यक्ति अपने कब्जे में नहीं ले सकता। अगर ऐसा किया गया है तो सरकार उसे तुरंत खाली करवाए।

पर्यावरण, वन एवं जलवायु परिवर्तन मंत्रालय आर्द्रभूमियों के पुनरुद्धार के लिए भी काम कर रहा है। इस कार्यक्रम के पहले चरण में पूरे देश में 100 आर्द्रभूमियों की बहाली (पुराने स्वरूप में लाने) और पुनरुद्धार का काम हो रहा है। इसके अलावा 130 वेटलैंड ऐसे हैं, जिन पर काम करने के लिए संबंधित राज्य सरकारों से बात की गई है। इसके लिए विभाग क्षेत्रीय स्तरों पर कार्यशालाएं चला रहा है, जिसमें वह विषय विशेषज्ञों को आमंत्रित करता है। आर्द्रभूमियों के इन विषय विशेषज्ञों को तकनीकी सहयोग भी प्रदान किया जा रहा है।

इस कार्यक्रम को लागू करने में चार तरीके अपनाए जा रहे हैं-

1-प्राथमिक जानकारी इकट्ठा की जाती है, जिसे वेटलैंड ब्रीफ डाक्यूमेंट कहा जाता है।

2-वेटलैंड की स्थितियों का त्वरित आकलन किया जाता है, जिसे वेटलैंड हेल्थ-कार्ड कहा जाता है।

3-वेटलैंड से प्रभावित होने वाले लोगों के बीच के कुछ लोगों को लेकर उनका एक मंच तैयार किया जाता है, ताकि उनके साथ मिलकर काम किया जा सके। इन लोगों को वेटलैंड्स मित्र कहा जाता है। वेटलैंड्स मित्रों की संख्या इस समय पूरे देश में 18242 है।

4-वेटलैंड की जैवविविधता और पारिस्थिकी के सामने उपस्थित चुनौतियों से निपटने के लिए उसके लिए वेटलैंड इंटीग्रेटेड मैनेजमेंट प्लान बनाया जाता है। फिर उसके अनुसार आगे काम किया जाता है। इस समय यह कार्यक्रम देश के विभिन्न जिलों में एक हजार वेटलैंड्स पर चलाया जा रहा है, जिनके सकारात्मक परिणाम देखने को मिले हैं। गोरखपुर का रामगढ़ ताल इसका ज्वलंत उदाहरण है (देखें फोटो), जो आज के दस साल पहले तक जलकुंभियों से पटा पड़ा था पर आज उसमें क्रूज (जहाज) चल रहे हैं। वहां शाम को लोगों की भारी भीड़ जुटती है। इसी तरह राजधानी लखनऊ में लखनऊ विकास प्राधिकरण (एलडीए) द्वारा चक गंजरिया क्षेत्र में विकसित किया गया वेटलैंड एरिया अपनी मिसाल आप है। पिछले दिनों वहां विहंग उत्सव का आयोजन किया गया, जिसमें बहुत से लोगों ने बर्ड-वाचिंग की (देखें इनसेट)। कुल मिलाकर आज जरूरत इस बात की है कि वेटलैंड्स के संरक्षण के प्रति लोगों में सकारात्मक भावना भरी जाए। लोगों के बीच जागरूकता अभियान चलाया जाए।

वेटलैंड के पुनरुद्धार का सबसे बेहतरीन उदाहरण है गोरखपुर का रामगढ़ ताल। आज से दस साल पहले यह ताल जलकुंभियों से पटा रहता था। आज स्थिति यह है कि इसमें क्रूज चलते हैं।

हम संकल्प करें कि जल क्रांति लाएंगे

जल का चिंतन और मंथन

पूरे विश्व के मानचित्र में केवल एक देश ऐसा है, जहां पर दया, त्याग, मानवता, करुणा, आध्यात्मिकता, अनुसंधान का सर्वाधिक विकास हुआ है, तो वह देश भारत है। भारत की जो विरासत है, वह गौरवशाली है। भारत से एक बड़ी गंभीर सोच निकलकर आई, जिसे हम पंचभूतों का चिंतन कहते हैं-क्षिति, जल, पावक, गगन, समीरा। भारतीय शास्त्रों में कहा गया है कि न केवल सृष्टि बल्कि हमारे शरीर का निर्माण भी पंचमहाभूतों से हुआ है। पांचों तत्वों से सारे ज्ञान और विज्ञान का निर्माण हुआ है। निघंटु के अंदर जल के 101 पर्यायवाची बताए गए हैं। जैसे, वर्षा का जो जल है, वह इंद्र कहलाता है। कुएं का जल वापी, नदी का जल नद, सरोवर का जल सर कहलाता है। यदि सरोवर को इंसान ने बनाया है तो वह तड़ाग कहलाता है। अगर प्रकृति ने बनाकर दिया तो वह उद्भूत कहलाता है..जले विष्णु, थले विष्णु...।

डॉ. राजेश कुमार सिंह

जीवित रहने के लिए पारिस्थितकीय संतुलन जरूरी है। मानवता अब पारिस्थिकीय असंतुलन का सामना कर रही है। जबकि हमने लंबे समय से क्षेत्रीय नियंत्रण, आर्थिक विकास, सांस्कृतिक पहचान और धार्मिक संबद्धता को प्राथमिकता दी है। आज की सबसे जरूरी चुनौती पर्यावरणीय स्थिरता है, जिसे अन्य सभी चिंताओं पर प्राथमिकता देनी चाहिए। अगर इस संकट पर ध्यान नहीं दिया गया तो यह हमें और अनगिनत प्रजातियों को खतरे में डाल देगा। जल प्रबंधन ही जीवन जीने की कला होनी चाहिए। इस समय हमें सस्टेनेबल लिविंग के बारे में भी सोचना चाहिए। विकास और प्रगति के नाम पर जिस तरह हम अविवेकपूर्ण तरीके से जल दोहन कर रहें हैं, वन काट रहे हैं, पहाड़ों को नष्ट कर रहे हैं, अपनी नदियों और समूचे जलतंत्र को नुकसान पहुंचा रहे हैं, उससे हम दूसरी महाप्रलय की तरफ बढ़ रहे हैं, जिसमें अनियमित वर्षा, बाढ़, सूखा और तापमान की अधिकता होगी। हमने न सिर्फ अपनी नदियों को गंदा किया है बल्कि अपने साथ-साथ तमाम जीव प्रजातियों को भारी नुकसान पहुंचाया है।

मांग-आपूर्ति का अंतर खतरनाक दर से बढ़ने के साथ दुनिया स्थायी जल जोखिमों का सामना कर रही है। उद्योग जल संसाधन प्रबंधन में एक महत्वपूर्ण हितधारक हैं और समुदाय के एक जिम्मेदार सदस्य के रूप में जल जोखिमों से निपटने में सक्रिय होने की आवश्यकता है। बढ़ता औद्योगिक उत्पादन, विशेष रूप से जल गहन उद्योग (थर्मल पावर प्लांट, स्टील, फार्मास्यूटिकल्स, टेनरी, पल्प एंड पेपर, माइनिंग, बेवरेजेज, ऑटोमोबाइल्स, टेक्सटाइल्स, फर्टिलाइजर, फूड इंडस्ट्री आदि) से पहले से ही भारत और दुनिया भर में सीमित मीठे जल के संसाधनों पर दबाव पड़ रहा है। बुनियादी ढांचे के विकास, कृषि, घरेलू आदि जैसे अन्य क्षेत्रों में जल की बढ़ती मांग के साथ-साथ जल की उपलब्धता पर बड़े संघर्ष हो रहे हैं। इसके अलावा जैसाकि दुनिया अब जल तटस्थता के बारे में बात कर रही है, इस महत्वपूर्ण संसाधन का विवेकपूर्ण उपयोग करने के लिए अतिरिक्त प्रयास करने की आवश्यकता है।

जल उपयोग अनुकूलन, जल लेखा प्रणालियों में सुधार और जल हानि और जल बचत के अवसरों की पहचान करना जल की खपत को कम करने के लिए प्रभावी दृष्टिकोण के रूप में काम कर सकता है। इसके अलावा कुशल जल अपशिष्ट उपचार प्रौद्योगिकियां और री-साइकिलिंग और पुनः उपयोग प्रथाएं खपत और अपशिष्ट उत्पादन को और कम कर सकती हैं। इसके अलावा जल और अपशिष्ट जल प्रबंधन को आवधिक संचालन के माध्यम से प्रभावी ढंग से लागू किया जा सकता है। इसके साथ, ईटीपी/एसटीपी का रिसाइकल किया हुआ जल खेती, सिंचाई में उपयोग किया जा सकता है, इससे भी मीठे जल पर निर्भरता कम हो सकती है। साथ ही साथ वाटर न्यूट्रलिटी-जल के संतुलित उपयोग के साथ-साथ जल के पुनर्उपयोग या जल के स्रोतों की बहाली हमारी पारिस्थितिकी के लिए लाभदायक हो सकता है।

जल हमारे जीवन की अनिवार्य आवश्यकता है। इसके बिना पृथ्वी पर जीवन असंभव है। नदियां और समुद्र पृथ्वी की समूची जलराशि को अपने में समेटे हुए हैं। सरोवरों और जलाशयों में जल का बहुत छोटा-सा हिस्सा ही सिमटा है। नदी भूतल पर प्रवाहित जलधारा है, जिसका स्रोत हिमनद (ग्लेशियर), झरना, झील या बारिश का जल होता है। यह अपनी बहाव की अंतिम यात्रा किसी झील या सागर में करती हैं। नदियों का मानव जीवन एवं धरती के पर्यावरण के लिए विशेष योगदान है। पारिस्थितकीय तंत्र एवं जैव विविधता

के लिए इनकी भूमिका हमेशा रही है। विश्व की सभी संस्कृतियां नदियों के किनारे ही जन्मी और विकसित हुई हैं। भारतीयों ने इन्हें सदा ही उन्हें देवी के रूप में पूज्यनीय माना है।

आज हिमालयी ग्लेशियर तेजी से पिघल रहे हैं। उत्तराखंड की सीमा के पहाड़ों/क्षेत्रों की 8 प्रतिशत हिमालयी पहाड़ियां बर्फ और चट्टान समेत खतरे में हैं। समुद्री ग्लेशियर, गोयांक ग्लेशियर और साउथ लोनाक ग्लेशियर (सिक्किम) भी बहुत तेजी से पिघल रहे हैं। निकट भविष्य में इन ग्लेशियरों का पिघला हुआ पानी भारी मात्रा में तबाही मचा सकता है। इसका परिणाम होगा-महामारी और प्रलय की आहट...। इसलिए हमें समय रहते सतर्क रहने की जरूरत है।

भारत की अधिकांश नदियां कई समस्याओं का सामना कर रही हैं। जिनमें प्रदूषण, जल संसाधनों का दुरुपयोग और पुराने कानून शामिल हैं। भारत में नदियां विभिन्न स्रोतों से प्रदूषित होती हैं। जिनमें औद्योगिक अपशिष्ट, घरेलू सीवेज, कृषि अपवाह, तेल रिसाव, खनन प्रक्रिया से निकलने वाला वेस्ट वाटर शामिल हैं। कृषि के लिए अत्यधिक जल का दोहन, अनुचित अपशिष्ट निपटान, वायुमंडलीय निक्षेपण (Deposition) और जलवायु परिवर्तन भी इसमें शामिल हैं।

प्रकृति की सारी व्यवस्था पीरियाडिकल है। गर्मी आती थी सही समय पर, सर्दी आती थी सही समय पर, वर्षा आती थी सही समय पर, बसंत आता था खास वक्त पर। सब बंधा था। लेकिन आज नहीं आती सही समय पर तो उसका कारण यह है कि हमने प्रकृति के साथ छेड़छाड़ की है अन्यथा दिन बिल्कुल तय थे, समय तय था, सब कुछ तय था वह वक्त पर आ जाती थी। शरीर भी बिल्कुल वैसा ही काम करता है।

इस तरह वातावरण में बहुत ज्यादा ऊर्जा बढ़ रही है। इस पर रोक नहीं लगी तो इसका परिणाम होगा-अधिक वर्षा, कम वर्षा, ज्यादा तापमान, भारी अंधड़, जिस पर न कोई टेक्नालोजी काम करेगी न ही कोई जुगाड़। तब क्या होगा ? इससे शुरू होगी फीड बैक लूप साइकिल की अधिकता। बर्फ ऊर्जा को नहीं सोखती तो बर्फ का तापमान नहीं बढ़ता। लेकिन अब क्लाइमेट चेंज की वजह से बर्फ पिघल रही है। अब चट्टानें एक्पोज हो रही हैं। जब चट्टानें एक्सपोज होंगी तो ये ऊर्जा का अवशोषण करेंगी। इससे तापमान बढ़ेगा और ग्लेशियर और तेजी से पिघलेंगे। इससे समुद्र और नदी और गरम होंगे। ये वाष्प बनकर वातावरण में फैलेंगे तो फिर एक और फीडबैक साइकिल रिपीट होगी।

आज हमारी जीवनदायिनी नदियां जिस तरह संकट में हैं, वह स्थिति कोई एक दिन में नहीं आ गई है। उनमें प्रदूषण न तो एक दिन में हो गया है, न ही यह कोई नई घटना नहीं है। यह काफी समय से चली आ रही है। इनको साफ करने की बहुतेरी कवायदें हुईं, लेकिन सभी का नतीजा ढाक के तीन पात ही रहा। तमाम बड़ी-बड़ी नदी सफाई योजनाएं

भारत में जल का उपयोग सबसे ज्यादा कृषि कार्यों में होता है। इसलिए जल की कम खपत वाली कृषि पद्धतियों के सुझाव दिए जाने लगे हैं। एनसीआईडब्ल्यूआरडी (नेशनल कमीशन आन इंटीग्रेटेड वाटर रिसोर्सेज डेवलपमेंट), इंडिया के एक अध्ययन के अनुसार कृषि कार्यों में जल का सबसे अधिक अर्थात 78 प्रतिशत होता है। जबकि घरेलू उपयोग में छह प्रतिशत, उद्योगों में पांच प्रतिशत, बिजली उत्पादन में तीन प्रतिशत और अन्य गतिविधियों में आठ फीसदी जल का उपयोग होता है। (स्रोतः एनसीआईडब्ल्यूआरडी)

अगर हमने उपलब्ध जल का उचित प्रबन्धन नहीं किया तो जल्दी ही धरती जलविहीन हो जाएगी।

चलाई गईं, पर इनकी बदहाल स्थिति में कोई अंतर नहीं आया। पर्यावरण, वन एवं जलवायु परिवर्तन मंत्रालय के एक आंकड़े के अनुसार देश भर में 311 नदियां प्रदूषित हैं। इसमें महाराष्ट्र की 55, मध्य प्रदेश की 19, बिहार एवं केरल की 18-18, कर्नाटक एवं यूपी की 17-17, गुजरात व पश्चिम बंगाल की 13-13 नदियां बेहद प्रदूषित हैं।

ऐसा इसलिए हुआ क्योंकि हम सभी अपने उत्तरदायित्व को भूल गए। बल्कि उससे बहुत दूर चले गए। आज स्थिति ऐसी आ गई है कि अगर हमें अपने को बचाना है, तो पहले नदियों और जलाशयों को बचाना होगा। सृष्टि का उद्भव जल से हुआ है। शरीर के पंचमहाभूत तत्वों में से एक जल भी है। कभी जल संरक्षण हमारा सामाजिक दायित्व होने के साथ-साथ हमारी संस्कृति का हिस्सा हुआ करता था। हमारे वैदिक ग्रंथ अथर्ववेद और शतपथ ब्राह्मण जैसे ग्रंथों में जल की महत्ता को बताया गया है। जल संरक्षण हमारी संस्कृति का हिस्सा अब भी है लेकिन अब हम उससे कट गए हैं। इससे बहुत दूर चले गए हैं।

दरअसल 19वीं सदी में भारत में आई औद्योगिक क्रांति के बाद से नदियों और दूसरे जलस्रोतों में प्रदूषण बढ़ता गया। चूंकि अधिकांश बड़े नगर नदियों के किनारे ही हैं, इसलिए इन नगरों में लगे उद्योगों का कचरा इन नदियों में डाला जाने लगा। इससे हमारी नदियां सदानीरा नहीं रहीं। कहीं वे विलुप्त हो गईं तो कहीं सूख गईं, तो कहीं पर केवल एक नाले की शक्ल में बचीं। जो बची हैं, वे तिल-तिलकर मर रही हैं। चाहे वह चेन्नई की कूवम नदी हो, कर्नाटक की तुंगभद्रा, पुणे की मुला-मुठा, अहमदाबाद की साबरमती, लखनऊ की गोमती या फिर झारखंड-पश्चिम बंगाल की दामोदर नदी हो। पूरे देश में सभी नदियों की स्थिति कमोबेस एक जैसी है। इसलिए आज लोगों को यह समझने की आवश्यकता है कि नदियों को बचाने के लिए प्राणपण के साथ लगें बल्कि विस्तृत परिप्रेक्ष्य में जल की उपलब्धता को देखें। अभी हम लोगों में से ज्यादातर लोग समझ नहीं पा रहे हैं कि स्वच्छ जल की उपलब्धता कितनी बची है ?

इसको इस तरह से समझ सकते हैं-पृथ्वी का 91 फीसदी भाग जल है। पृथ्वी पर जो जल है, वह 97 प्रतिशत जल नमकीन जल या समुद्री जल के रूप में उपलब्ध है। इसे हम पी नहीं सकते। नहा भी नहीं सकते। अब बचा 03 प्रतिशत जल, इसमें भी 02 प्रतिशत जल ग्लेशियर्स (हिमनद) के रूप में उपलब्ध है। बाकी बचता है केवल एक फीसदी, जो झीलों, तालाबों, नदियों के रूप में हमारे पास मौजूद है। यही जल हम उपयोग कर सकते हैं लेकिन यह भी प्रदूषित है। इसको हमें संरक्षित करके रखना है।

Type of water footprint: नीला पानी सतही और भूजल को मिलाकर बना होता है। यह जल झीलों नदियों और जलाशयों में होता है। बारिश के जल से नीला पानी फिर भर जाता है।

Blue water: Surface water or ground water into products and returned in to the environment

Green water: Evaporated water which comes from rain and humadity

Grey water: Water polluted by all productions of goods and services. ग्रे वाटर अनुपचारित घरेलू अपशिष्ट जल है, जो सिंक, शॉवर और वॉशिंग मशीन जैसे गैर-शौचालय स्रोतों से आता है। इसमें वसा, तेल, ग्रीस कार्बनिक पदार्थ और कभी-कभी थोड़ी मात्रा में मानव अपशिष्ट भी होते हैं।

Rain water: Pure, Storm water- Suspended solids, oil and grease, agriculture waste etc.

Sewage water: Physicochemical, Organic

Industrial waste water: Physical, chemical and organic

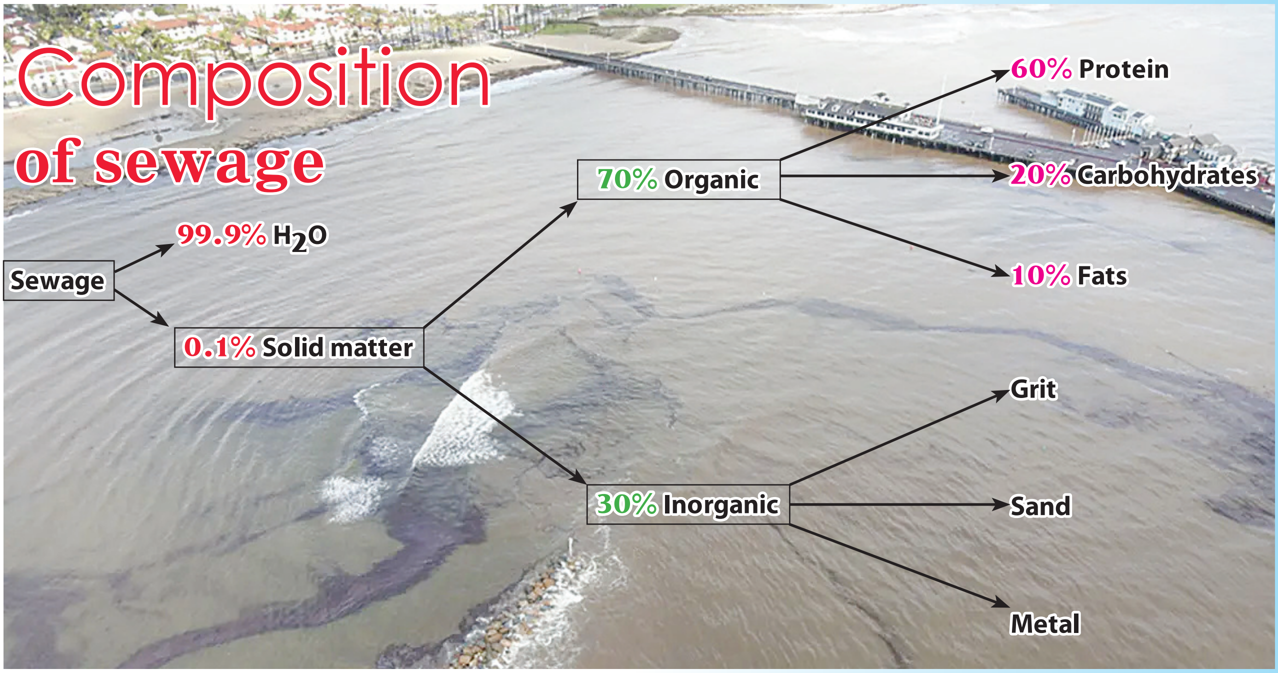

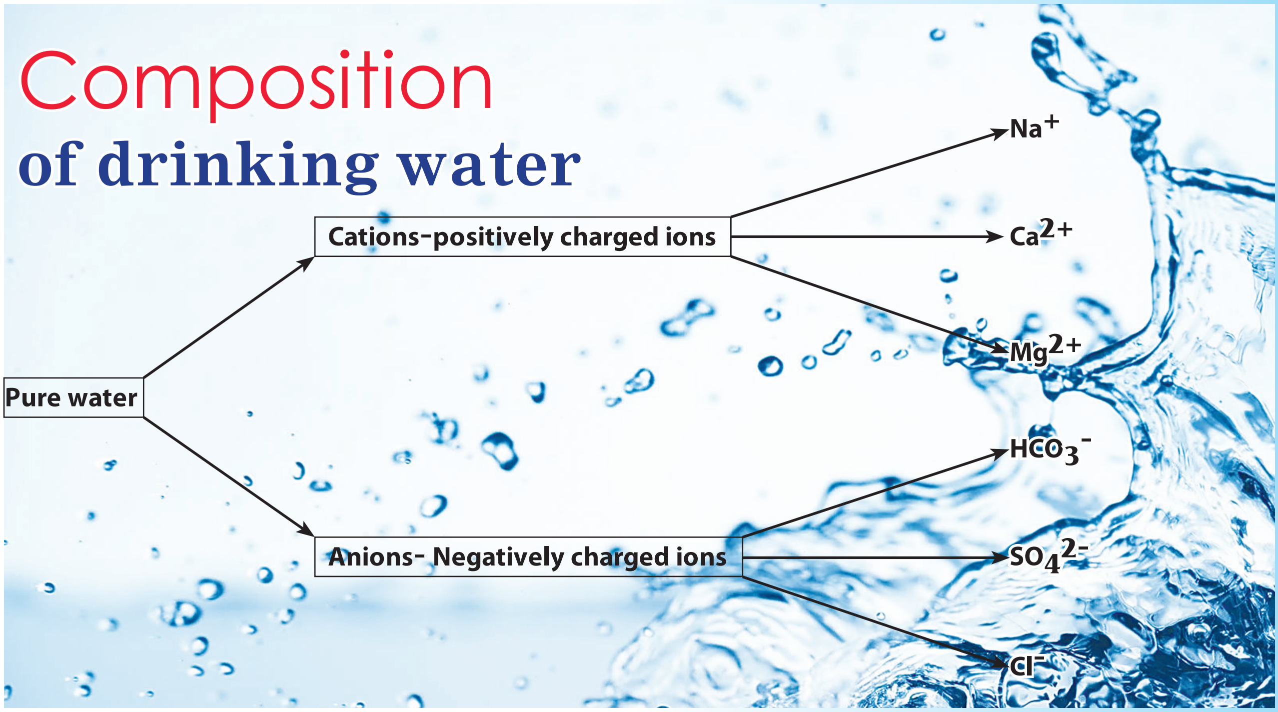

The normal drinking water would provide>1% of four minerals; Copper 10%, Calcium 6%, Magnesium 5% and Sodium 3%. Minor components- K^+, Mn^{2+}, Fe^{2+} Si^{4+}, No^-, F^- & Dissolved organic carbon (DOC), Natural trace elements. Impurities- Pesticides & Fertilizers from human activities, Pharmaceuticals and heavy metal from waste water.

आजादी के बाद से 75 वर्षों में जल की वार्षिक प्रति व्यक्ति उपलब्धता में 75 प्रतिशत की गिरावट आई है। वर्ष 1947 में यह जहां 6042 क्यूबेक मीटर थी, वहीं 2021 में 1486 क्यूबेक मीटर हो गई है। वहीं, 2001 में जल की यह उपलब्धता 1816 घन मीटर प्रतिव्यक्ति थी वह 2011 में 1545 घन मीटर रह गई। 2025 में यह 1140 घन मीटर रह जाएगी, तो 2050 तक पानी की प्रति व्यक्ति / प्रतिवर्ष उपलब्धता केवल 650 घन मीटर ही रह जाएगी। भारत की आबादी दुनिया का 18 प्रतिशत है लेकिन हमारे पास जल संसाधनों का केवल चार प्रतिशत है। भारत में कुल उपयोग योग्य जल संसाधन 1123 बिलियन क्यूबिक मीटर (बीसीएम) है, जिसमें 690 बीएमसी सरफेस वाटर और 433 बीसीएम ग्राउंड वाटर है।

इंडियन स्टैंडर्ड 1971 के अनुसार घरेलू जल की खपत 135 लीटर प्रति व्यक्ति प्रतिदिन थी। बड़े निर्माण और टाउनशिप मैनुअल 2010 द्वारा एमओईएफ द्वारा 135 एलपीसीडी को 86 एलपीसीडी तक कम कर दिया गया है। उपकानूनों के अनुसार रिचार्ज के माध्यम से क्षेत्र की पुनःपूर्ति पूरे परियोजना क्षेत्र के सतह के अपवाह के बराबर होगी। लेकिन इसका जमीनी स्तर पर क्रियान्वय नहीं हो रहा है। जल संकट का कारण सरफेस वाटर संसाधनों का अनुचित उपयोग, मानव गतिविधियों, हस्तक्षेप के कारण हाइड्रोलाजिकल चक्रों में परिवर्तन, ग्राउंड वाटर और अपशिष्ट जल प्रदूषण के शोषण पर वर्तमान जल संसाधन परिदृश्य औद्योगिक और कृषि मांग का विस्तार, बढ़ती लागत उत्पादन और उपचार लागत के कारण 40 से 50 फीसदी तक जल की कमी हो गई है।

झीलें, तालाब और जल निकाय एक शहर के स्पंज होते हैं। वे अतिरिक्त जल वर्षा रखते हैं और कमी के समय ग्राउंड वाटर को रीचार्ज करते हैं। भूमि अवसाद एक भू-खतरा है, जो जमीन की सतह की अचानक या क्रमिक सेटिंग के कारण होता है। जिसका मुख्य कारण ग्राउंड वाटर भूमि की सतह दर प्रतिवर्ष 5एमएम से अधिक है। शहरी क्षेत्र में ग्राउंड वाटर में ईकोलाई, सीवेज, नालियों, सेप्टिक टैंकों से लीचेट की पहचान इस तरह के प्रदूषण के कारणों में से एक रूप में की गई है।

वर्ष 1970 से विश्व की जनसंख्या दुगुनी हो गई है। पहले यह 3.7 बिलियन थी, अब 2024 में यह 8 बिलियन हो गई है। इस जनसंख्या का पेट भरने के लिए 2050 तक हमें भोजन का उत्पादन 70 फीसदी तक बढ़ाना होगा। 60 प्रतिशत गरीब जनसंख्या के मुकाबले एक प्रतिशत अति धनी वर्ग अधिक जल का उपयोग कर रहा है। ऐसे में जल संकट आपके दरवाजे पर ख़ड़ा है, इसको समझें। मिनिमलिस्ट (कम से कम साधनों में जीवनयापन) कैसे बनें, इस पर विचार करें। जल प्रदूषण के प्रभावी समाधान के लिए यह जरूरी है कि हम इसके प्रमुख स्रोतों का पता करें। प्रदूषण एक लाइलाज बीमारी है, जिसे केवल रोका जा सकता है। विश्व के बड़े-बड़े जलस्रोत, झीलें, नदियां, जलाशय आदि समाप्त हो रहे हैं। इसके लिए हर नागरिक को आगे आने की जरूरत है। हर एक को अपनी जवाबदेही तय करनी होगी। अपनी आंतरिक जलवायु को भी शुद्ध करना होगा। जिस दिन हमारी प्रकृति हमारी हो गई, उसी दिन से समस्या समाप्त होने लगेगी।

भारत विश्व में जल की समस्या से सर्वाधिक प्रभावित देशों में से एक है। मीठे जल की मांग बढ़ती जा रही है, जबकि उपलब्ध जल की मात्रा सीमित और प्रदूषित है। किसानों, उद्योगों और शहरी निवासियों द्वारा जल के अत्यधिक दोहन के कारण नदियां, झीलें, जलाशय सूख रहे हैं और भूजल स्तर में गिरावट आ रही है। जब प्रति व्यक्ति वार्षिक जल उपलब्धता 1700 घन मीटर से कम हो जाती है, तो उसे जल-संकटग्रस्त माना जाता है। जब जल स्तर 1000 घन मीटर से नीचे चला जाता है, तो उसे जल दुर्लभ कहा जाता है। आज हमें जल के प्रदूषित होने की समस्या को प्राथमिकता के आधार पर समझने और उसे प्रदूषणरहित करने की जरूरत है। इसके साथ ही इससे जुड़ी गलत चीजों और दुरुपयोगों को नियंत्रित करने की भी आवश्यकता है।

> जिन लोगों के घरों में एअर कंडीशनर चलता है, वे उससे निकले जल को इन्वर्टर में डाल सकते हैं, ये आसुत जल (डिस्टिल्ड वाटर) होता है। इससे उन्हें इन्वर्टर में डालने वाला जल नहीं खरीदना पड़ेगा। इसके अलावा इस पानी को बेचा भी जा सकता है। अगर किसी के घर में चार-पांच एअर कंडीशनर चलते हैं, तो वह रोजाना पर्याप्त मात्रा में जल का संग्रहण करके उसे बाजार में बेच सकता है।

नदियों के प्रदूषण के साथ एक दूसरा बड़ा संकट यह है कि हमारा भूजल स्तर दिनोंदिन घटता जा रहा है, इसके लिए हमें चाहिए कि हम वर्षा के जल को कैसे बचाएं, जो पुनः जाकर समुद्र में न मिले। जो जल औद्योगिक या कृषि के इस्तेमाल के लिए है, उसको अलग-अलग किया जाना (सेग्रीगेशन) आवश्यक है।

आज जल के प्रत्येक उपयोगकर्ता को चाहिए कि वह अपनी दैनिक आदतों में सुधार करते हुए स्वच्छ जल का प्रतिदिन बचाव करे। ब्रश करते समय, सेव करते समय, नहाते समय, किचेन में काम करते समय जल बचाने की सोचे। टायलेट में लो-फ्लो सिस्टम लगवाएं। बाथरूम में लो-फ्लो शावरहेड लगवाएं। दाढ़ी बनाते समय नल को खुला न रखें। इस तरह हम काफी जल बचा सकते हैं।

जैसा कि सर्वविदित है कि शुद्ध जल के द्वारा ही स्वच्छ हवा और शुद्ध भोजन मिल सकता है। तो हमें इस बात की आवश्यकता है कि हम यह इन्श्योर करें कि हम पानी को सस्टेनेबल-वे में ही शेयर करेंगे।

ग्राउंड वाटर में स्थैतिक भूजल (Dianemic Zone) जल जो चट्टानों में इतनी गहराई पर संग्रहीत होता है कि जल स्तर में प्राकृतिक रूप से उतार-चढ़ाव नहीं होता और इस जल का उपयोग सूखे के दौरान पीने के लिए किया जाना चाहिए। दूसरा गतिशील जल स्तर (Static Zone), जो भूतल से 100 मीटर नीचे होता है। इसको हमें नहीं निकालना चाहिए लेकिन हम इसको भी निकाल रहे हैं। यही सबसे ज्यादा कष्टदायी स्थिति है। अर्बन एरिया में पानी रोककर रखा जाना चाहिए।

भूगर्भीय जलस्तर को बढ़ाने के लिए हमें अफारेस्टेशन (वनीकरण) अर्बन क्षेत्रों में माइक्रो फारेस्ट लगाए जाने चाहिए। आज यह अत्यंत आवश्यक हो गया है। सड़कों, स्टेट हाईवे, नेशनल हाईवे पर जो डिवाइडर बने होते हैं, उन पर भी डेन्स प्लांट्स या वनीकरण से भूगर्भ जलस्तर में वृद्धि की जा सकती है तथा शहरों में छोटे-छोटे एक्वाटिक पांड्स बनाए जाने चाहिए। जिससे कि बरसात में पानी को जमा किया जा सकता है। स्कूलों और पंचायतों के साथ मिलकर भी ग्राउंडवाटर कन्जर्वेशन के संबंध में जागरूकता अभियानों को चलाने की आवश्यकता है।

नगरों में जल संरक्षण की आवश्यकता ज्यादा है। क्योंकि नगरीय क्षेत्रों में उपलब्धता के मुकाबले पानी की मांग अपेक्षाकृत ज्यादा होती है। जल संरक्षण जल की उपलब्धता को सुनिश्चित करेगा। इससे भविष्य के लिए स्वच्छ पानी की उपलब्धता को हम सुनिश्चित कर सकते हैं। हम रणनीति

पिछले दिनों चक्रवात आने के बाद अमेरिका के कई शहर पानी से जलमग्न हो गए। वहां सब कुछ ठप हो गया।

बनाकर वर्षाजल संरक्षण, तालाबों, झीलों, नहरों आदि के द्वारा पानी के क्षेत्र को बढ़ा सकते हैं।

जल संरक्षण का मुद्दा दोनों तरह के जल को लेकर है, चाहे वह ऊपरी जल हो या भूगर्भ जल। आज चिंता की बात यह है कि दोनों में ही ह्रास हो रहा है। पानी के ऊपरी सतह का जल चाहे वह तालाब, झील, नदी के रूप में हो चाहे भूगर्भ जल, उसे प्राकृतिक रूप से हमें फिर से चार्ज करना या भरना चाहिए।

पूरे विश्व में लगभग दो बिलियन लोग अभी भी स्वच्छ पेयजल से महरूम हैं। एसडीजी रिपोर्ट 2022 के अनुसार आने वाले वर्षों में दुनिया के आधे देश भीषण जलसंकट से जूझेंगे। इनकी संख्या बढ़ भी सकती है। जलवायु परिवर्तन और जनसंख्या में वृद्धि उस एक प्रतिशत इस्तेमाल करने लायक पानी की स्थिति को और अधिक खराब कर देगी। कुल मिलाकर कहा जाए तो इस पानी पर जबर्दस्त संकट है।

पिछले 25 सालों से सूखे की स्थिति बहुत विकराल हुई है, इसी के साथ-साथ पानी का संकट भी विकराल हो रहा है। यह जलसंकट दुनिया के प्रमुख पहाड़ी क्षेत्रों पर रहने वाली आबादी के लिए भी होगा, जो दुनिया की जनसंख्या का छठां हिस्सा है। पानी के स्रोत, ग्लैशियर, बर्फ से ढके हुए अन्य इलाके जिस तरह क्षरित हो रहे हैं, उससे पानी की उपलब्धता की स्थिति कम हो रही है। दुनिया की अधिकांश पर्वत श्रृंखलाओं (इसमें भारत की पर्वत श्रृंखलाएं भी शामिल हैं) में बारिश कम हो रही है। यह एक भयावह स्थिति को जन्म दे रही है। समुद्र तल में वृद्धि से भूजल में खारापन (सेलेनाइजेशन) बढ़ने का अनुमान है। इसी तरह समुद्रतटीय क्षेत्रों में मनुष्य के लिए और वातावरण में शुद्ध जल की उपलब्धता दिनोंदिन गिर रही है। ग्लोबल वार्मिंग की बढ़ोत्तरी को 1.5 सेंटीग्रेड तक सीमित करने के लिए लगी दुनिया पानी की कमी का सामना करने को अभिशप्त है। यद्यपि इस समस्या से लड़ने के लिए प्रयास भी बहुतेरे हो रहे हैं। क्लाइमेट चेंज से पानी की गुणवत्ता भी प्रभावित हो रही है। सूखा पड़ेगा, बाढ़ आएगी तो यह सुनिश्चित है कि साफ पानी भी प्रदूषित हो जाएगा। ऊपर से कोढ़ में खाज का काम करेंगे इस साफ पानी में खेतों से बहकर आने वाले जहरीले कीटनाशक, जो इसे और अधिक प्रदूषित बना देंगे। क्लाइमेट चेंज, बढ़ती जनसंख्या और बढ़ता पानी का संकट सभी मिलकर खाद्य आपूर्ति पर असर डालते हैं। हमारे पास उपलब्ध पानी का खासा हिस्सा कृषि में प्रयुक्त होता है। यह प्रति व्यक्ति रोजाना 2000 लीटर से 5000 लीटर तक होता है। ऐसा भूजल, जल प्रदूषण, असमान या गलत वितरण और उपयुक्त जल प्रबंधन नहीं होने से होता है।

भारत में भूगर्भ जल की स्थिति अति-क्षरण के कगार पर है, जिसका कारण है-कृषि, औद्योगिक और घरेलू कार्यों में इसका आवश्यकता से अधिक उपयोग। इसी के साथ-साथ जनसंख्या और उद्योगों में वृद्धि, बांधों की बढ़ती संख्या, खाद्य पदार्थों और नगदी फसलों की बढ़ती मांग, बढ़ता नगरीकरण और रहन-सहन की उच्च गुणवत्ता ऐसी चीजें हैं, जो भूगर्भ जल दोहन को लगातार बढ़ाती ही जा रही हैं।

उद्योगों में लगे उत्प्रवाह ट्रीटमेंट प्लांट ठीक से चलें भी, यह सुनिश्चित किया जाना बेहद जरूरी है। अक्सर देखा जाता है कि ईटीपी/ एसटीपी लगा तो दिए जाते हैं लेकिन वे केवल दिखावे के होते हैं। या तो बंद पड़े होते हैं या फिर ठीक से काम नहीं करते।

वाटरशेड डेवलपमेंट-झीलों/ तालाबों/नदियों के संकट से संरक्षण तक

जैवविविधता पार्कों की स्थापना को दिया जाना चाहिए बढ़ावा

- नगरों के आसपास के उपनगरों में पौधारोपण करके प्रदूषण और अतिक्रमण से लड़ा जा सकता है। झीलों, तालाबों, नदियों को साफ करने की दिशा में सबसे पहला कदम उनकी गाद निकालने या उनका कचरा साफ करना होना चाहिए।
- कैना इंडिका के पौधे किनारों पर उगाए जाने चाहिए, जो गंदे पानी से पोषक तत्वों को निकाल लेते हैं। इसके अलावा झीलों के किनारे पौधरोपण करना चाहिए, जिससे वहां एक समृद्ध सूक्ष्म-पारिस्थितिकी तंत्र का निर्माण हो सके। इससे छोटी प्रजातियों यथा पक्षी, सरीसृप वर्ग के जीव, उभयचर प्राणियों और पौधों को बढ़ावा मिलेगा। इसके साथ-साथ इसमें सामुदायिक सहभागिता (कम्युनिटी पार्टिसिपेशन) को भी बढ़ावा दिया जाना चाहिए।

- नगरीय जलस्रोत अतिक्रमण, गंदगी के पाटे जाने व प्रदूषण की मार से त्रस्त रहते हैं। झीलों के पुनर्जीवन और उनके विकास के लिए काम हो। इसके साथ साप्ताहिक साफ-सफाई पर ध्यान दिया जाए।
- जैवविविधता को बढ़ावा दिया जाए। जैवविविधता पार्क की स्थापना हो ताकि प्रवासी पक्षियों को आकर्षित किया जा सके।
- एसटीपी के शोधित पानी को झीलों में भेजा जाए। झीलों से यह पानी झील के निचले हिस्से में जाए, ताकि पानी का एक नेटवर्क बन सके। साथ ही झीलों, तालाबों, नदियों की निरंतर निगरानी हो।
- नदियों से निकाली गई गाद का इस्तेमाल नागरिक अपनी जमीन को सही करने में कर सकते हैं। यह मिट्टी की उर्वराशक्ति को बढ़ाती है। तालाबों का पुनर्जीवन भूजल के स्तर को भी पुनर्जीवन दे सकता है।

जल का बचाव ही आज की तारीख में दुनिया को बचा सकता है। जल की बचत आपकी आर्थिक बचत कर सकती है। इसके साथ ही यह खाड़ी और अन्य जलस्रोतों की पुरानी स्थिति बहाल कर सकती है, जो हमारे पर्यावरण के स्वास्थ्य के लिए अच्छा होगा। यह वाटर और बेस्ट वाटर के ट्रीटमेंट की कीमत को कम कर सकता है। यह जल को पंप करने, पानी को गरम करने, सेनीटेशन और पानी को हाइजनिक करने में लगने वाली ऊर्जा को कम कर सकता है।

जल संबंधी कई खतरे हैं। गड़बड़ाए क्लाइमेट चेंज ने प्रकृति चक्र को गड़बड़ा दिया है। इसके चलते मौसम संबंधी प्राकृतिक आपदाएं (एक्सट्रीम वेदर इवेंट्स) बढ़ रही हैं। आने वाले दिनों में सूखे और बाढ़ जैसी प्राकृतिक आपदाओं की संख्या पहले से और ज्यादा और खतरनाक होने की संभावना है। इससे जुड़े खतरे उतने ही बढ़ रहे हैं, जितना डिग्री सेल्सियस हमारी धरती का तापमान बढ़ रहा है। क्लाइमेट चेंज से जल उपलब्धता (गुणवत्ता और परिमाण दोनों में) संबंधी चुनौतियां पहले से अधिक विकराल होती हैं। दरअसल, जलवायु संकट के केंद्र में जल ही है। कम वर्षा और पानी की अधिक मांग नलकूपों के छिद्रों को सुखा देती है। इसके विपरीत, अधिक वर्षा और बाढ़ जलस्रोतों

और सेनिटेशन सुविधाओं को क्षतिग्रस्त कर देती है और तालाबों, झीलों और समुद्रों में हानिकारक अपशिष्ट पहुंच जाता है।

जल संकट के परिणामस्वरूप पानी की कीमतें बढ़ सकती हैं, जिससे समाज में असमानता आ सकती है। इससे लोगों के सामने हाथ धोने और साफ-सफाई संबंधी दूसरे काम करने के लिए आवश्यक माने जाने वाले जल की मात्रा कम हो सकती है, जिससे सामाजिक दिक्कतें पैदा हो सकती हैं। सामाजिक असमानता तब होती है, जब समाज के भीतर संसाधनों का असमान वितरण होता है। जल संकट से यह असमानता आएगी ही आएगी।

बड़ा सवाल है कि इसका समाधान क्या है ? वाटर मैनेजमेंट कैसे हो? वास्तविकता यह है कि समुचित जल प्रबंधन से जल संबंधी प्राकृतिक स्थल सुरक्षित रहेंगे, जिससे न केवल ग्रीनहाउस गैसों का उत्सर्जन कम हो सकता है बल्कि यह हमें प्राकृतिक आपदाओं से भी बचा सकता है। आर्द्र भूमियां (वेटलैंड्स) कार्बन को सोखने में बहुत अधिक प्रभावी हैं। वन, छोटे आकार के पौधों वाली झाड़ियां, दलदली जमीनें न केवल कार्बन को सोखकर ऑक्सीजन का भंडारण करती हैं, बल्कि ग्रीनहाउस गैसों के उत्सर्जन में कमी लाती हैं। मौसम के दुष्प्रभावों से बचाने में वेटलैंड प्रतिरोधक के साथ-साथ प्राकृतिक ढाल के तौर पर भी काम करते हैं। वेटलैंड जल भंडारों को बढ़ाने के साथ-साथ उनका शुद्धिकरण भी करते हैं। यह हमारे जलापूर्ति और सेनीटेशन सिस्टम के लिए उपयोगी होने के साथ-साथ आधुनिक कृषि में मददगार होते हैं। ड्रिप सिंचाई पद्धति से, जिसे टपक सिंचाई भी कहते हैं, जल का उपयोग अधिक कुशलता के साथ होता है।

आज आवश्यकता इस बात की है कि पानी और गंदे पानी के रीयूज और रीसाइकल के लिए डब्ल्यूटीपी, ईटीपी, एसटीपी, एफएसटीपी को अधिक से अधिक विकेंद्रित किया जाए। हमें अपनी रोजाना की अच्छी आदतों में स्वच्छ जल की बचत की आदत आवश्यक रूप से शामिल करनी होगी। यह बेहद आसान है। बस हम अपनी दैनिक आदतों में सुधार कर लें। हमारे किचन से कम से कम फूड-वेस्ट निकलें, इसके प्रति भी हमें सतर्कता बरतनी चाहिए। आरओ के प्रासेस से निकले अपशिष्ट जल का इस्तेमाल हम बर्तन धोने, पोछा लगाने में कर सकते हैं। इसी तरह एअरकंडीशनर से निकले जल का इस्तेमाल भी हम कर सकते हैं। उस जल को हम बेच भी सकते हैं।

वाटर बैलेंस अप्रोच बनाने के लिए जेडएलडी (जीरो लिक्विड डिस्चार्ज) वेस्ट वाटर ट्रीटमेंट पर जोर देना होगा। हमें घरों में लगी टोंटियों से हो रहे पानी के रिसाव के प्रति सावधान रहना होगा। क्योंकि टोंटी से गिरने वाला बूंद-बूंद पानी देखने में तो बहुत मामूली लगता है पर यह भारी मात्रा में जल की बर्बादी करता है। हमें कृषि क्षेत्र के लोगों को वाटरशेट मैनेजमेंट पर ध्यान देना चाहिए। इस मामले में ड्रिप सिंचाई जैसी पद्धतियां बेहद उपयोगी हैं।

> भारत की नदियों और जलाशयों के जल स्तर में भारी गिरावट आ रही है। गंगा नदी की गहराई अधिकतम 8.1 मीटर बची है यमुना नदी की 6.5 मीटर, गोदावरी की 6.2 मीटर और कृष्णा नदी की 6.1 मीटर गहराई बची है जबकि 1965 और 1980 के बीच भारत में गंगा नदी की गहराई पूर्वी तट पर 62.64 मीटर और पश्चिमी तट पर 30.13 मीटर थी।

केंद्र सरकार का अमृत सरोवर मिशन, जिसे पिछले 24 अप्रैल, 2022 में जल संरक्षण के उद्देश्य को लेकर शुरू किया गया था, आज अच्छा काम कर रही है। इस योजना का उद्देश्य जल निकायों के विकास के साथ-साथ उनका कायाकल्प भी करना है। सरकार का प्लान है कि इससे लगभग एक एकड़ या उससे बड़े आकार के 50 हजार से अधिक जलाशयों का निर्माण किया जाए। इसे सरकार आम लोगों और स्वयंसेवी संगठनों के सहयोग से कर रही है और अच्छा कर रही है। इस योजना में सरकार के जल संरक्षण विभाग के साथ-साथ ग्रामीण विकास विभाग, पेयजल एवं स्वच्छता विभाग, भूमि संसाधन विभाग, वन, पर्यावरण और जलवायु परिवर्तन विभाग और पंचायती राज विभाग, विभाग शामिल हैं।

क्लाइमेट चेंज के चलते बारिश के पैटर्न में लगातार और तेजी से बदलाव देखने में आ रहा है। इसके साथ ही जिस तरह वन कट रहे हैं और भू-परिवर्तन हो रहा है, उसके भयानक परिणाम भूस्खलन, बाढ़, अनचाही भारी बारिश आदि के रूप में सामने आ रहे हैं। समाप्त हो चुके जलस्रोत, झील, तालाब आदि बदलकर गंदे पानी के भंडार बनकर रह गए हैं, जिनके चलते 300 से अधिक प्रजातियों का जीवन संकट में है। इसमें पक्षी, सरीसृप, उभयचर जीव और पौधे शामिल हैं। एक एसटीपी झीलों-तालाबों के नेटवर्क को पुनर्जीवित कर सकता है। इससे गंदा पानी शोधित होने के बाद झीलों-तालाबों में जाता है।

नदियों, तालाबों का हमारे जीवन में बहुत महत्व है। जैसे भोजन, जल, बिजली, परिवहन, स्वच्छता, मनोरंजन आदि के स्रोत के रूप में नदियां व झीलें समृद्ध और विविध पारिस्थितकीय तंत्र प्रदान करती हैं। जो विश्व भर में मानव समाज के मेरुदंड के रूप में कार्य करती हैं। वर्तमान और भविष्य की पीढ़ियों के लिए मानवता और पारिस्थितिकी को बनाए रखने के लिए जल की बहाली और संरक्षण सर्वोच्च प्राथमिकता होनी चाहिए। नदी के किनारे के गांवों एवं शहरों में स्वच्छ सफाई अभियान चलाने चाहिए। रीचार्ज जोन का संरक्षण करना चाहिए। इस समय नदियां, झीलें, तालाब विशाल डंपिंग जलाशय बन गए हैं। हमें यह सुनिश्चित करना चाहिए कि सीवेज, अपशिष्ट और अन्य जहरीले पदार्थों जैसे कि अपशिष्ट को डंप करके नदियों को प्रदूषित न किया जाए। लोगों और सरकार को औद्योगिक कचरा और सीवेज इकाइयों में अपशिष्ट उपचार संयंत्रों की स्थापना सुनिश्चित करनी चाहिए। आज झीलें और ग्रामीण जलाशय अवैध कब्जे करके खत्म किए जा रहे हैं। लगभग सभी नदियों में जबर्दस्त प्रदूषण है, जो भयावह है। वहीं पांच राज्यों में प्रवाहमान गंगा का प्रदूषण बड़ी चिंता का विषय है। गंगा का अविरल प्रवाह केंद्र और प्रदेश की सरकारों की कार्यसूची में भी है फिर भी स्थिति दयनीय होती जा रही है। गंगा को उसके मूल स्वरूप में कैसे लाया जाए, यह विचारणीय है।

जलाशय हमारी संस्कृति के हिस्सा रहे हैं। ये जल संस्कृति के प्राण रहे हैं। प्रकृति ने दुनिया

अंटार्कटिका पर संकट, लगातार पिघल रही बर्फ

अंटार्कटिका की बर्फ की परत औसतन 2.16 किलोमीटर मोटी है लेकिन यह अधिकतम 4.9 किलोमीटर मोटी हो सकती है। यह वर्फ की परत लगभग 14 मिलियन वर्ग किलोमीटर तक फैली है, जिसके अंदर दुनिया के शुद्ध जल का लगभग 90 प्रतिशत हिस्सा मौजूद है।

अंटार्कटिका की यह बर्फ की परत बीते वर्ष 2002 से 150 बिलियन टन प्रति वर्ष पिघल रही है। यह क्षय पृथ्वी की सतह और महासागरों के गर्म होने के कारण हो रहा है। अगर अंटार्कटिका के पूरी बर्फ पिघल जाए तो सभी समुद्र तल लगभग 60 मीटर बढ़ जाएंगे। अंटार्कटिका इस समय तीव्र जलवायु परिवर्तन के दौर से गुजर रहा है जो पारिस्थितकीय तंत्र और पूरी दुनिया की जलवायु को गड़बड़ कर दे रहा है, जिसका परिणाम समुद्र का स्तर बहुत तेजी से बढ़ने के रूप में सामने आएगा। दक्षिणी समुद्र तट बहुत अधिक गर्मी और बढ़ते कार्बनडाईआक्साइड को झेल रहा है जो समुद्रों को पहले से अधिक गर्म और अधिक अम्लीय बना दे रहे हैं। पेंग्विन के रहवास-स्थल कम हो रहे हैं या खत्म हो जा रहे हैं। इसके अलावा और भी बुरे असर दिख रहे हैं।

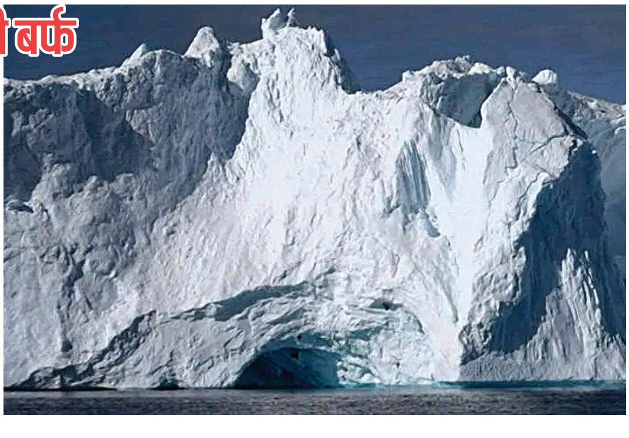

को मनोरम बनाया है। यहां तीन हजार से अधिक प्राकृतिक झीलें हैं। ये औद्योगिक कचरे से भरी पड़ी हैं। कश्मीर के डल झील की स्थिति भी दयनीय है। इसका प्रत्यक्ष असर है कि जल क्षेत्र का आकार सिकुड़कर आधा रह गया है। यही हाल बंगलुरु की झीलों का भी है, जो कुछ विलुप्त हो चुकी हैं और कुछ समाप्त हो रही हैं। सभी जलस्रोतों पर आधुनिकता का प्रभाव है या कह सकते हैं कि उसका आक्रमण है। देश के तमाम भागों में पेयजल प्रदूषित है। इसे पीने वाले कैंसर सहित तमाम बीमारियों के शिकार हो रहे हैं। शुद्ध पेयजल का यह संकट देशव्यापी है। कहने को तो नदियों के किनारे एसटीपी (सीवेज ट्रीटमेंट प्लांट) लगाए गए हैं पर वे सुचारु और वैज्ञानिक रूप से से काम नहीं कर रहे हैं। इससे जल की गुणवत्ता खराब हो रही है।

अब हम नदी संस्कृति नहीं बल्कि नाला सभ्यता के आदी होते जा रहे हैं। अथर्ववेद में कहा गया है-हे सरिताओं, आप नाद करते हुए बहती हैं इसलिए आपका नाम नदी है। हमारे पूर्वजों ने हमारी नदियों को प्राणवान माना था और पवित्रता और शुद्धि की प्रार्थना की गई है। लेकिन जलस्रोतों के संरक्षण का प्रश्न यथावत है। नदियों में जबर्दस्ती औद्योगिक उत्प्रवाह/विष मिलाया जा रहा है। इस मामले में उच्च न्यायालयों, सर्वोच्च न्यायालय और एनजीटी में तमाम जनहित याचिकाएं दायर की गई हैं। इसी के साथ कुछ नगर निगमों और प्रदूषण नियंत्रण बोर्डों पर जुर्माना भी लगाया गया है किंतु स्थिति यथावत ही है। नदियां प्रकृति की अविभाज्य अंग हैं। हम सभी हैं। हम जलस्रोतों पर निर्भर हैं और जलस्रोतों का स्वास्थ्य हम पर निर्भर है। नदियां मरेंगी तो हम भी नहीं बचेंगे। लेकिन हो यह रहा है कि प्रकृति के दोहन की हमारी भूख दिन प्रतिदिन अनियंत्रित होती जा रही है, जिसका परिणाम सामने है।

औद्योगीकरण बेशक जरूरी है लेकिन उसके कचरे को गंगा में या अन्य नदियों में फेंकना क्यों जरूरी है ? अधिकांश महानगर/शहर नदी तट पर ही स्थित हैं और इनका सीवेज बिना किसी शोधन के नदियों में बहाया जा रहा है। उत्तर प्रदेश के कानपुर और उन्नाव के चमड़ा उद्योगों/बूचड़खानों का उत्प्रवाह प्रत्यक्ष या परोक्ष रूप से नदियों में ही जाता है। यहां दिखाने के लिए कॉमन एसटीपी लगे हैं लेकिन इनका संचालन और रखरखाव न के बराबर है। उन्नाव में लोन नदी के तट पर बसे गांवों में हैंडपंपों का पानी जानलेवा रसायनों से भरा है। केंद्रीय प्रदूषण नियंत्रण बोर्ड और राज्य प्रदूषण नियंत्रण बोर्ड इसके लिए कुछ करने के बजाय खानापूरी कर रहे हैं। ऐसे औद्योगिकीकरण या औद्योगिक विकास में विनाश ही विनाश दिखता है। इस स्थिति में हम सब मूकदर्शक हैं। भारत को अपनी औद्योगिक नीति का पुनर्गठन करना ही चाहिए। हम नदियों के तट पर उद्योग न लगाने की नीति बनाने पर विचार कर सकते हैं। प्रदूषण

गांवों के गड्ढों और ताल-तलैय्यों का संरक्षण ही हमें जलवायु परिवर्तन के कहर से बचा सकता है।

<< ये आदमी केवल 50 वर्ष का है लेकिन दिख रहा है 85 वर्ष का। 2070 में 50 वर्ष की उम्र के लोग इसी तरह दिखेंगे। इसका कारण होगा- पीने के पानी के पर्याप्त उपलब्धता न होना। कुछ वर्ष पहले प्रसिद्ध स्पेनिश मैगजीन क्रोनिकॉज डि लॉस टीमपोज ने एक आलेख में जब यह भविष्यवाणी की तो दुनिया में तहलका मच गया। लेकिन सच्चाई यही है। 2070 में लोग इसी तरह की तमाम त्रासदियों को झेलने को मजबूर होंगे।

फैलाने वाले सभी उद्योगों को रोकना ही समस्या का समाधान है। गंगा-यमुना के आसपास स्थापित उद्योगों को अन्यत्र स्थापित करने की नीति भी बनाई जानी चाहिए। आज नदियों का डिजाल्व आक्सीजन लेवल शून्य होता जा रहा है। जिससे जलीय जंतुओं का जीवन खतरे में पड़ता जा रहा है। उनका जीना मुश्किल हो रहा है।

> हमारी पृथ्वी पर 800 करोड़ से ज्यादा लोग रहते हैं जबकि पृथ्वी की क्षमता डिजाइन है केवल 300-400 करोड़ लोगों के लिए, अब सोचना हमें है कि उपलब्ध संसाधनों का उपयोग और बचाव कैसे करें।

महानगरों की अपेक्षा गांवों में कैंसर ज्यादा हो रहे हैं। इसका कारण नदियों का प्रदूषण ही है। ग्रामीण वर्ग इसका शिकार हो रहा है। वह नदियों में स्नान और आचमन करता है, जबकि नदियां उसके लायक हैं ही नहीं और ग्रामीण लोग इसके दुष्परिणामों से अनभिज्ञ हैं। इसी का परिणाम है कि अस्पतालों में भीड़ बढ़ती ही जा रही है।

पर्यावरण की प्रतिष्ठित पत्रिका `डाउन टू अर्थ' में छपी एक रिपोर्ट के अनुसार सहारनपुर में हिंडन नदी आज कैंसर जैसे घातक रोगों का वाहक बनकर रह गई है। यहां की फैक्ट्रियों से निकले अपशिष्टों से हिंडन के पानी में आक्सीजन एकदम नहीं बची है। हिंडन का जल इतना दूषित हो चुका है कि इस नदी के किनारे बसे शहरों (मुजफ्फरनगर, मेरठ, बागपत, गाजियाबाद, गौतमबुद्धनगर) में कैंसर और चर्मरोगियों की संख्या बढ़ रही है। बड़ा सवाल उठता है कि उद्योगों को नदियों में विष घोलने की यह अनुमति किसने दी ? उन्हें ऐसा करने की छूट नहीं दी जा सकती है। इन उद्योगों के साथ-साथ सभी नालों पर भी एसटीपी लगाना सुनिश्चित करना होगा। ये एसटीपी वैज्ञानिक व सुचारु ढंग से चलें, इसकी भी कड़ी निगरानी करनी होगी।

भूगर्भ जल के प्रदूषित होने से आर्सेनिक प्रभावित क्षेत्र लगातार बढ़ रहे हैं। मनुष्य के अलावा अन्य प्राणी भी इससे प्रभावित हो रहे हैं। चूंकि कृषि में उपयोग में लाया जाने वाला जल भी प्रदूषित रहता है इसलिए इसका प्रभाव हमारी फूड चेन पर भी पड़ता है। इससे जैव विविधता भी प्रभावित होती है। औद्योगिक विकास का उद्देश्य राष्ट्रीय समृद्धि का संवर्धन करना भी होता है। लेकिन जलस्रोत और नदियां अमूल्य राष्ट्रीय संपदा हैं। इन्हें खोकर जीवन की कल्पना भी नहीं की जा सकती। नदियां हमारी प्राण हैं। ये निर्मल बहें, अविरल कल-कल करती रहें। इसके लिए जल प्रबंधन उपायों और गुणवत्ता पर ध्यान देना ही होगा। एक आदर्श जल संस्कृति का टिकाऊ विकास किया जाना परमाश्यक है। यह कार्य अकेले सरकार नहीं कर सकती।

लोक-शक्ति बड़ी है। संस्कृति का विकास लोक करता है। प्राचीन इतिहास में जल, नदी, झील और जलाशय संरक्षण और नमस्कारों के योग्य थे, तो अब क्यों नहीं हो सकते? इसलिए संकल्प लीजिए कि हम जागरूकता फैलाने के लिए अग्रसर होंगे। एक जल क्रांति लाएंगे और अपनी पूज्यनीय नदियों को पुनः संरक्षित करते हुए उनके मूल स्वरूप की बहाली के प्रयास में यथासंभव मदद करेंगे।

एक अनुमान के अनुसार वर्ष 2070 तक पानी की भारी कमी के कारण गंभीर पर्यावरणीय, सामाजिक और आर्थिक संकट उत्पन्न हो सकता है। उस समय जब इंसान 50 वर्ष का होगा लेकिन निर्जलीकरण के कारण वह 85 वर्ष का दिखाई देगा। वह अपने बचपन को याद करेगा, जब पानी प्रचुर मात्रा में उपलब्ध था, चारों ओर हरियाली थी और लोग इसे बिना किसी चिंता के इस्तेमाल करते थे। तब सभी जलस्रोत या तो सूख चुके होंगे या फिर बुरी तरह प्रदूषित हो चुके होंगे। उद्योग ठप हो चुके होंगे और बेरोजगारी अपने चरम पर होगी। लोग सीमित मात्रा में उपलब्ध पानी के लिए संघर्ष कर रहे होंगे। जिसमें वे अपने वेतन का एक हिस्सा पीने योग्य पानी के रूप में प्राप्त कर रहे होंगे। इसी के साथ, 80% तक खाद्य पदार्थ कृत्रिम हो चुका होगा। जबकि निर्जलीकरण और पराबैंगनी विकिरण (UV radiation) के कारण त्वचा कैंसर और गुर्दे की बीमारियाँ तेजी से फैल रही होंगी। वायु इतनी प्रदूषित हो चुकी होगी कि लोग सांस लेने योग्य हवा के लिए भुगतान करने को मजबूर होंगे और बचे हुए हरे क्षेत्रों की भारी सुरक्षा की जा रही होगी। 2070 तक जलवायु परिवर्तन, अम्लीय वर्षा और प्रदूषण जीवन को असहनीय बना देगा और हम पछतावे से भरकर, अपने बच्चों को अतीत की सुंदरता के बारे में केवल कहानियाँ सुनायेंगे। तब हम इस बात पर दुखी हो रहे होंगे कि हमारी पीढ़ी ने पर्यावरण को बचाने के संबंध में चेतावनियों को लगातार अनदेखा किया, जिसके परिणामस्वरूप आने वाली पीढ़ियों को भारी कीमत चुकानी पड़ रही है। हमें इसको एक गंभीर चेतावनी के रूप में लेना ही पड़ेगा और जल संरक्षण और पर्यावरण रक्षा के लिए लोगों को जागरूक करने का आग्रह करना होगा।

वन्यजीव

अवैध वन्यजीव व्यापारः जैवविविधता और पर्यावरण पर भारी खतरा

दुनियाभर के कई देशों में जीव-जंतुओं और उनके शारीरिक अंगों के उपयोग को लेकर सदियों से तमाम तरह की भ्रांतियाँ फैली हुई हैं, जिसने वन्यजीव तस्करी को प्रमुखता से बढ़ावा दिया है। पारंपरिक चिकित्सा, जानवरों को पालतू बनाने, जादुई उपयोग, मांस सेवन, जैविक अंगों के सजावटी उपयोग, औषधीय निर्माण आदि कारणों के चलते दुनियाभर में वन्यजीवों की बड़े पैमाने पर तस्करी की जाती है। बाघ और तेंदुएं की खाल, गैंडे के सींग, हाथियों के दांत, सांपों की केंचुल, हिरनों के खुर, पैंगोलिन के शल्क, मॉनिटर लिजार्ड के जननांग, मेढक की टांग, शार्क के पंख, कस्तूरी मृग की कस्तूरी और नेवले के बाल आदि शारीरिक अंगों की अन्तर्राष्ट्रीय बाजारों में भारी मांग के चलते वन्यप्राणियों का बेरहमी से शिकार कर उनकी तस्करी की जाती है।

हरेंद्र श्रीवास्तव

अपने विकास आरंभ से ही मनुष्य विभिन्न उद्देश्यों की पूर्ति हेतु वन्यजीवों का शिकार करता चला आ रहा है। मानव द्वारा वन्यप्राणियों के शिकार का एक लम्बा इतिहास रहा है। मानव सभ्यता के शुरुआती चरणों में भोजन एवं मांस के लिए जंगली जीव-जंतुओं का शिकार किया जाता था। जंगलों, गुफाओं और शिलाश्रयों में रहने वाला आरंभिक मानव जानवरों का शिकार कर ही अपना भरण-पोषण करता था। खूंखार प्राणियों से स्वयं की सुरक्षा हेतु भी मानव द्वारा उनका शिकार किया जाता था। हालाकि धीरे-धीरे मनुष्यों ने खानाबदोश जिंदगी छोड़ खेती करना सीख लिया और पशुपालन भी करने लगा लेकिन शिकार की आवश्यकता फिर भी उसे हमेशा बनी रही। जंगली जीवों से अपने पालतू पशुओं और फसलों की रक्षा के लिए शिकार करना एक प्रमुख कारण था। जानवरों का शिकार कर मनुष्यों ने उनके हड्डियों से तरह-तरह के औजार एवं आभूषण भी बनायें। समय के साथ-साथ कई बदलाव हुए और वन-वन भटकने वाला मानव जंगलों एवं गुफाओं की दुनिया को छोड़ गांवों, कस्बों व नगरों में रहने लगा।

जैसे-जैसे मानव सभ्यता तेजी से विकसित होने लगी शिकार अब उसकी परंपरा और संस्कृति का भी एक अहम हिस्सा बन गया। पहले जहां शिकार मांस, भोजन व औजार के उद्देश्य से किया जाता था वहीं अब शिकार ने सांस्कृतिक रूप धारण कर लिया। विभिन्न मानव संस्कृतियों में विवाह आदि अनेकों उत्सवों तथा खेल एवं शौक के लिए जानवरों का शिकार किया जाने लगा। प्राचीन काल में राजाओं-महाराजाओं एवं शासकों द्वारा जंगली जीवों का शिकार करना उनका शौक बन गया। शेर, बाघ, हाथी आदि जीवों के शिकार को राजा की शान एवं प्रतिष्ठा से जोड़कर देखा जाने लगा। मुगल शासकों ने भारत में 'शाही शिकार' की परंपरा को जन्म दिया। शिकार के शौक की हद इतनी बढ़ गयी कि एक ही दिन में सैकड़ों-हजारों परिन्दों को मौत के घाट उतार दिया गया। भारत में ब्रिटिश शासकों ने भी जंगली जानवरों का बड़ी बेरहमी से शिकार किया। अंधाधुंधा शिकार के चलते जीव-जंतुओं की आबादी तेजी से घटने लगी और कई प्रजातियाँ विलुप्ति के कगार पर आ पहुंची। वैज्ञानिक शोधों ने चेताया कि यदि वन्यजीवों का शिकार नहीं थमा तो धरती पर समस्त जीव-जगत का अस्तित्व खतरे में पड़ जायेगा। धीरे-धीरे लोग जीव-जंतुओं के महत्व को लेकर जागरूक हुए और सरकारों द्वारा वन्यप्राणियों के संरक्षण हेतु कानून भी बनाये गये। इसके बावजूद भी शिकार का ये सिलसिला खत्म नहीं हुआ और आज जंगली जीवों का शिकार दुनियाभर के कई देशों में आर्थिक कमाई का एक प्रमुख जरिया बन गया है।

आधुनिक युग में वन्यजीवों का शिकार वैश्विक स्तर पर अवैध तस्करी एवं काले धंधो का खतरनाक रूप ले चुका है और इसने जीव-जंतुओं की कई प्रजातियों के अस्तित्व को बेहद खतरे में डाल दिया है। वन्यजीवों की तस्करी आज दुनिया के सबसे बड़े अवैध व्यापारों में से एक है और ये सैकड़ों देशों में व्यापक रूप से फैला हुआ है। वैश्विक स्तर पर वन्यजीवों के अवैध व्यापार का कारोबार प्रतिवर्ष करीब 20 अरब डॉलर का है। हथियार, ड्रग्स और मानव तस्करी के बाद वन्यजीव व्यापार आज दुनिया का चौथा सबसे बड़ा अवैध व्यापार है। वन्यजीव तस्करी का तात्पर्य किसी भी वन्यजीव को जीवित अथवा मृत रूप में वैध या अवैध तरीके से एक देश से दूसरे देश में भेजना है जिसके अंतर्गत पौधे एवं जंतु दोनों सम्मिलित हैं। संरक्षित प्रजातियों के वन्यजीवों को पकड़ना, उन्हें कैद में रखना, उनका शिकार करना, आयात-निर्यात करना, तस्करी व खरीद-फरोख्त करना, उन्हें पालतू बनाना और उनके मांस का उपभोग करना आदि गतिविधियाँ अवैध वन्यजीव व्यापार की श्रेणी में गिनी जाती हैं। वन्यजीवों के अवैध शिकार एवं तस्करी के पीछे अनेकों कारण हैं जिनमें सबसे मुख्य कारण है जीव-जंतुओं के बारे में प्रचलित मिथक।

अनुमान है कि अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर हर साल दुनियाभर में 10 करोड़ वन्यजीवों एवं पौधों की तस्करी होती है। आज दुनियाभर के कई देशों में वन्यजीव अपराधी गिरोहों का विशाल नेटवर्क फैला हुआ है। चीन के बाजारों में वन्यजीव उत्पादों की खुलेआम बिक्री होती है जहां भालू के पित्त से लेकर गैंडे के सींग और बाघ की हड्डियों से लेकर पैंगोलिन का शल्क तक सब कुछ बड़ी आसानी से पाया जा सकता है। हालांकि वैज्ञानिक तौर पर वन्यजीवों के अंगों का कोई भी प्रामाणि एक औषधीय मूल्य नहीं है इसके बावजूद पारंपरिक चिकित्सा हेतु चीन में वन्यजीवों की भारी मांग निरन्तर बनी हुई है। चीन के बाद वियतनाम अवैध वन्यजीव व्यापार का एक प्रमुख केंद्र है।

हालांकि अवैध वन्यजीव व्यापार के खिलाफ भारतीय वन्यजीव अधिनियम और साइट्स द्वारा कानूनी प्रतिबंध लगाये गये हैं लेकिन अभी ये कायदे-कानून ज्यादा सशक्त एवं प्रभावी नहीं है। यही कारण है कि कमजोर कानूनों के चलते अपराधियों में डर नहीं है और खुलेआम देशी-विदेशी जीव-जंतुओं की तस्करी जारी है। सरकारों को चाहिए कि वो हवाई अड्डों व अंतर्राष्ट्रीय सीमाओं पर कड़े पहरे लगाएं ताकि वन्यजीवों की सीमापार तस्करी को रोका जा सके। दण्ड एवं जुर्माने की प्रक्रिया को और अधिक सख्त बनाने की आवश्यकता है ताकि वन्यजीव अपराधियों के दिलोदिमाग में कानून का खौफ बना रहे। जनजाति समुदाय के शिकारियों एवं तस्करों को टूरिस्ट गाइड, वन संरक्षक एवं सफारी-ड्राइवर जैसे रोजगार प्रदान कर सरकार उन्हें इस काले धंधों से बाहर निकाल सकती है।

आज इस बात की बेहद जरूरत है कि लोग वन्यजीवों की पर्यावरणीय भूमिका को समझें और स्वयं जागरूक बनें। हम सभी मनुष्यों का अस्तित्व भी जीव-जंतुओं से प्राकृतिक रूप से जुड़ा हुआ है अतः हमें खुद इस बात की फिक्र होनी चाहिए कि आखिर जब धरती ग्रह पर जीव-जंतु ही नहीं रहेंगे तो फिर भला हमारा अस्तित्व भी कैसे कायम रह सकता है? वन्यजीवों को भी आजाद रहने का नैसर्गिक अधिकार है जो उन्हें ईश्वर द्वारा प्राकृतिक रूप से प्रदान किया गया है। अपने स्वार्थ के लिए पछियों एवं कछुओं को कैद रखना प्राकृतिक एवं नैतिक दोनों रूपों से अनुचित है।

स्टडी

फुलहर झील: मानवीय अतिक्रमण की चुनौतियां

ममता शुक्ला एवं पल्लवी सिंह

जल, जीवन की रामबाण औषधि है, जो हमारे ग्रह पर सभी जीवित जीवों का पोषण और पुनः पूर्ति करता है। जल सर्वव्यापी है क्यों कि यह पृथ्वी की सतह का 70ः भाग जल से ढका हुआ है। स्थलीय या जलीय विभिन्न प्रकार के पारिस्थितिकी तंत्र को आकार देने में जल एक महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। यह उन बहुमूल्य संसाधनों में से एक है जो सभी रूपों में जीवन को प्रोत्साहित करता है। पृथ्वी पर असमान वितरण के कारण कुछ जल प्रांतों में पानी की कमी है जबकि अन्य में प्रचुरता है। जलवायु, भूगोल और मानवीय गतिविधियाँ जैसे कारक इस वितरण को प्रभावित करते हैं। जलवायु परिवर्तन और जनसंख्या वृद्धि ने जल संसाधनों पर और दबाव डाला है, जिससे सतत प्रबंधन महत्वपूर्ण हो गया है। वैश्विक जल चुनौतियों से निपटने के लिए जल संरक्षण और प्रबंधन, कुशल सिंचाई और अंतर्राष्ट्रीय सहयोग जैसे प्रयास आवश्यक हैं। दूसरी ओर, उत्तर प्रदेश, भारत में एक बड़ा और आबादी वाला राज्य होने के कारण, इसका सतही जल परिदृश्य विविध है। गंगा और यमुना, दो प्रमुख नदियाँ, जो इस राज्य से होकर बहती हैं, इन महत्वपूर्ण जल निकायों की उपस्थिति के बावजूद, उत्तर प्रदेश को प्रदूषण, औद्योगिक निर्वहन और अत्यधिक दोहन जैसी चुनौतियों का सामना करना पड़ता है। इन मुद्दों के समाधान के प्रयासों में प्रदूषण नियंत्रण उपाय, नदी संरक्षण परियोजनाएं और राज्य में सतही जल निकायों की भलाई सुनिश्चित करने के लिए स्थायी जल उपयोग को प्रोत्साहित करना सम्मिलित है। उत्तर प्रदेश राज्य में बहने वाली सबसे पुरानी नदी गोमती एक भूजल आधारित नदी है।

गोमती नदी को लंबे समय से इस क्षेत्र में रहने वाले लाखों लोगों की जीवन रेखा माना जाता है, जो उत्तर प्रदेश के पीलीभीत जिले के मध्य से होकर बहती है। गोमती या गोमती नदी, गंगा नदी की एक सहायक नदी है और यह भूजल से भरी नदी है। गोमती नदी माधो टांडा, पीलीभीत, (उत्तर प्रदेश), जनपद में गोमत ताल (जिसे औपचारिक रूप से फुलहर झील के रूप में जाना जाता है) से निकलती है। पीलीभीत जिले के पूरनपुर ब्लॉक में गोमती नदी के उद्गम के पास अनेकों छोटी धाराओं के निर्माण और इसकी नींव में योगदान देने वाले छोटे जल निकायों द्वारा वर्गीकृत परिदृश्य की निर्भरता इनके अविरल प्रवाह में है। इन क्षेत्रों में अक्सर मिट्टी के कटाव, वनों की कटाई और कृषि अपवाह जैसी चुनौतियों का सामना करना पड़ता है जो पानी की गुणवत्ता को भी प्रभावित कर सकते हैं। पूरनपुर ब्लॉक में गोमती नदी के उद्गम के पास जल निकायों के स्वास्थ्य को बनाए रखने के लिए स्थानीय संरक्षण पहल, वनीकरण परियोजनाएं और टिकाऊ कृषि पद्धतियाँ अत्यन्त महत्वपूर्ण हैं। इसका उद्गम स्थान गंगा के मैदान के पीडमीट क्षेत्र में

हिमालय की ढलान के पास स्थित है। यह उत्तर प्रदेश में 960 किमी (596 मील) तक फैली है और वाराणसी में सैदपुर, कैथी के पास गंगा नदी से मिलती है। अपने मार्ग के दौरान नदी उत्तर प्रदेश के पीलीभीत, शाहजहांपुर, सीतापुर, लखनऊ, बाराबंकी, सुल्तानपुर, जौनपुर और गाजीपुर जिलों से होकर बहती है। गोमती नदी एक लम्बा बेसिन बनाती है, जो छ्ँ.म् दिशा में बहती है।

उत्तर प्रदेश में पीलीभीत जिले की विशेषता कई नदियाँ और जल निकाय हैं। शारदा नदी और उसकी सहायक नदियाँ, विभिन्न तालाबों और छोटे जलाशयों के साथ, जिले में सतही जल संसाधनों में योगदान करती हैं। हालांकि, कई क्षेत्रों की तरह,

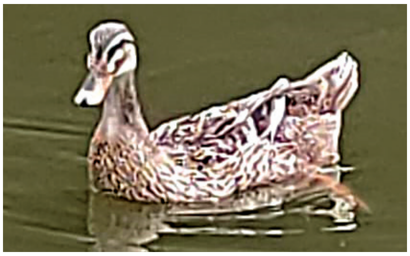

पीलीभीत को प्रदूषण, कृषि के लिए अत्यधिक निष्कर्षण और अतिक्रमण जैसी चुनौतियों का सामना करना पड़ता है शारदा नदी और उसकी सहायक नदियाँ, तालाबों और जलाशयों जैसे छोटे जल निकायों के साथ-साथ महत्वपूर्ण भूमिका निभाती हैं। हालाँकि, वर्तमान स्थितियों के बारे में विशिष्ट विवरण के लिए स्थानीय आकलन की आवश्यकता होगी। प्रदूषण, अत्यधिक निकासी और अतिक्रमण जैसी समस्याएँ अभी भी प्रासंगिक हो सकती हैं। पूरनपुर ब्लॉक में सतही जल निकायों के स्वास्थ्य को पोषित करने और उन्हें प्रबुद्ध करने के लिए सरकारी सहायता के साथ-साथ समुदाय द्वारा संचालित संरक्षण और सुरक्षा प्रयास महत्वपूर्ण हैं।

पीलीभीत जिला इस राज्य के सबसे प्रमुख जिलों में से एक है, जिसका क्षेत्रफल 1712 वर्ग किमी, जिसमें कुल सात ब्लॉक सम्मिलित हैं, जिनमें से पूरनपुर अपनी समृद्ध जैव विविधता और गतिशील प्रकृति के साथ सबसे महत्वपूर्ण ब्लॉक में से एक है, विशेष रूप से इसके विविध प्रवासी पक्षी जो आकर्षण का केंद्र हैं। यह क्षेत्र कई प्रवासी पक्षियों और आवासीय क्षेत्रों को भी घर रहा है, जिनमें लगभग 326 प्रजातियाँ शामिल हैं जो पिछले कई दशकों से लगातार कम होती जा रही हैं। पिछले कुछ दशकों में यह उत्तरी क्षेत्र अत्यधिक तेजी से पर्यावरणीय परिस्थितियों का सामना कर रहा है। इस क्षेत्र में बदलती पर्यावरणीय स्थिति ने बदलती जैव विविधता को जन्म दिया है।

विभिन्न प्राकृतिक और जलवायु परिवर्तन, विकासात्मक गतिविधियाँ और वनों की कटाई, अनियोजित शहरीकरण और औद्योगिक गतिविधियाँ जैसी विभिन्न मानवजनित गतिविधियाँ पारिस्थितिक तंत्र, मानव स्वास्थ्य और समग्र ग्रह स्थिरता के लिए खतरा पैदा करती हैं। जंगलों और जल निकायों जैसे घटते प्राकृतिक संसाधनों के कारण पर्यावरणीय परिस्थितियों में भारी क्षति देखी गयी है।

अध्ययन क्षेत्र में, फुलहर झील प्रमुख सतही जलस्रोतों में से एक है, जिसकी स्थानिक सीमा में लगातार गिरावट देखी जा रही है। 2003-2023 के बीच की अवधि के लिए उच्च रिजोल्यूशन उपग्रह जनित उपग्रहीय डेटा का उपयोग करके फुलहर झील की स्थानिक सीमा का एक समय श्रृंखला विश्लेषण किया गया है।

फुलहर झील को क्षरण, प्रदूषण और अतिक्रमण जैसी कई चुनौतियों का सामना करना पड़ रहा है। उपग्रह से प्राप्त डेटा स्पष्ट रूप से इस झील की स्थानिक सीमा में महत्वपूर्ण कमी का संकेत देता है। 1972 में झील की स्थानिक सीमा 6.07 हेक्टेयर थी, जो 2003 में घटकर 3.975 हेक्टेयर हो गई है, इसके अलावा पर्यटन उद्देश्यों के लिए खराब प्रबंधन और विकासात्मक गतिविधियों में वृद्धि हुई है। झील की स्थानिक सीमा 4.152 हेक्टेयर (1.73 हेक्टेयर गीला हिस्सा और 2.408 हेक्टेयर सूखा हिस्सा) है। इसके बाद 2017 में एक बार फिर झील का क्षेत्रफल घटकर 3.021 हेक्टेयर रह गया, जो अंततः 2023 में केवल 3.0 हेक्टेयर रह गया। जल निकाय में इस उतार-चढ़ाव ने पर्यावरण की एक अलग स्थिति को जन्म दिया है, जिसने अंततः क्षेत्र की पारिस्थितिकी को प्रभावित किया है। भूमि उपयोग में परिवर्तन, जैसे वनों की कटाई, कृषि विस्तार और शहरीकरण, सतही जल निकायों में पानी की गुणवत्ता में गिरावट में योगदान कर सकते हैं। बढ़ता हुआ अवसादन, पोषक तत्वों का अपवाह और प्रदूषण जलीय पारिस्थितिक तंत्र को नुकसान पहुंचा सकता है, पानी की स्पष्टता को कम कर सकता है और स्वच्छ जल स्रोतों पर निर्भर जलीय जीवों और मानव आबादी के स्वास्थ्य को खतरे में डाल सकता है।

भविष्य की जलापूर्ति मांग पर संकट गहराने का खतरा

बेलगाम हुआ भूजल दोहन घटती गई उपलब्धता

डॉ. आर. एस. सिन्हा

क्लाइमेट चेंज के मौजूदा दौर में देश में जल संसाधनों की उपलब्धता बेहद नाजुक स्थिति में है। पानी को असीमित व मुफ्त का उत्पाद मानकर जिस बड़े पैमाने पर विशेष रूप से भूगर्भ जल संसाधनों का अन्धाधुंध दोहन सिंचाई, घरेलू उपयोग, उद्योग व निर्माण गतिविधियों में किया जा रहा है, उससे आने वाले वर्षों में आपूर्ति और मांग के बीच एक बड़ी खाई पैदा होने का पूरा खतरा है, जिसकी भरपाई मौजूदा कोशिशों से नामुमकिन दिखती है।

देश में पानी की सकल उपलब्धता, सतही जल और भूजल मिलाते हुए, एक ताजा अध्ययन में 2155 बिलियन क्यूबिक मीटर आंकी तो गई है, किंतु उपयोग के लिए उपयुक्त जल केवल 1123 बिलियन क्यूबिक मीटर है यानी कुल उपलब्ध जल का 52 प्रतिशत ही उपयोग किया जा सकता है। कहने को तो उपयोग लायक उपलब्ध भूजल (433 बिलियन क्यूबिक मीटर) के मुकाबले नदी, जलाशय, झीलों में उपयोग लायक चिन्हित सतही जल की मात्रा कहीं अधिक 690 बिलियन क्यूबिक मीटर आंकी गई है, परन्तु आश्चर्यजनक यह है कि उपयोग किए जाने के लिए अपेक्षाकृत अधिक सतही जल उपलब्ध होने के बाद भी देश में 60% सिंचित कृषि भूजल पर ही निर्भर है और अधिकतर औद्योगिक, पेयजलापूर्ति व अन्य गतिविधियां भी भूजलपर ही निर्भर है। सरकार के फ्लैगशिप कार्यक्रम 'जल जीवन मिशन' की योजना में भी मुख्य रूप से बड़ी संख्या में नलकूपों से ही आपूर्ति की जा रही है।

स्पष्ट है कि उपयोग हेतु उपलब्ध सतही व भूजल संसाधनों के प्रबंधन व नियोजन में तालमेल और समन्वय की घोर कमी है। इस कारण ही भूजल पर अधिक दबाव होने से इस प्राकृतिक संसाधन का दोहन बेलगाम होता जा रहा है। ऐसे में भूगर्भ जल पर आधारित ₹सस्टेनेबल डेवलपमेंट गोल्स₹ कैसे हासिल होंगे, यह बड़ा सवाल है?

घटती जा रही प्रति व्यक्ति जल उपलब्धताः विगत 75 वर्षों में प्रति व्यक्ति जल उपलब्धता वर्ष 1951 के स्तर से घटकर वर्तमान में मात्र 25 प्रतिशत रह गई है, जो संकटग्रस्त स्थिति है। जल उपलब्धता के इस स्तर में जिस प्रकार लगातार गिरावट आ रही है, उससे आने वाले वर्षों में जनसंख्या वृद्धि के सापेक्ष खाद्यान्न के उत्पादन, बढ़ती औद्योगिक मांग, अवस्थापना व निर्माण कार्यों तथा सर्वोच्च प्राथमिकता वाले पेयजल सेक्टर के लिए पर्याप्त पानी मुहैया करा पाना चुनौतीपूर्ण होगा।

देश में प्रति व्यक्ति जल उपलब्धता के आकलन से जुड़ी भारत सरकार की रिपोर्ट के अनुसार वर्ष 1951 में यह आंकड़ा प्रति व्यक्ति 5177 घन मीटर आंका गया था, जो वर्ष 2024 में घटकर देश में

कुल उपलब्ध जल के सापेक्ष लगभग 70% घटकर 1485 घन मीटर के स्तर पर आ गई है । चूंकि आबादी बढ़ती गई और उसी के साथ प्रति व्यक्ति जल उपलब्धता भी कम होती गई है। दरअसल, सतही व भूगर्भ जल संसाधनो की मात्रा सीमित है, इसीलिए जनसंख्या वृद्धि के साथ प्रति व्यक्ति जल उपलब्धता पर दबाव बढ़ना स्वाभाविक है। रिपोर्ट के अनुसार प्रति व्यक्ति जल की उपलब्धता 1700 घन मीटर पहुंचने पर जल तनाव (वॉटर स्ट्रेस) की स्थिति होने की बात कही गई है और यह स्तर 1000 घन मीटर पहुंचने पर वॉटर स्कार्सिटी (पानी की कमी) की स्थिति उत्पन्न हो जाएगी। इससे यह स्पष्ट है कि देश में जल तनाव की स्थिति विद्यमान है और धीरे-धीरे पानी की कमी हमें चुनौती देगी क्योंकि ऐसी स्थिति में अगले दो दशकों में पानी की बढ़ती मांग के साथ आपूर्ति को हासिल कर पाना कैसे सुनिश्चित किया जा सकेगा ?

यद्यपि वर्ष 2000 से भारत सरकार व राज्य सरकारें, विशेष कर भूजल के गिरते स्तर और अति दोहन की स्थिति को लेकर नीतिगत निर्णय लेने में काफी सक्रिय रही हैं। परंतु जमीन पर उनका प्रभावी क्रियान्वयन दिखाई नहीं पड़ा है। वर्षा जल संचयन और भूजल रिचार्ज को लेकर निरंतर कोशिशें भी जारी है, लेकिन जिस रफ्तार से भूजल का अनियंत्रित दोहन दिन-प्रतिदिन बढ़ता जा रहा है और एक्यूफर्स (भूजल धारक स्ट्रेटा) खाली होते जा रहे हैं, उस स्थिति से निपटने के लिए वर्षा जल संचयन और रिचार्ज जैसी कोशिशें कारगर साबित नहीं हो पा रही है और चौतरफा दोहन के कारण तमाम शहरों और ग्रामीण क्षेत्रों में भूजल स्तर में कई- कई मीटर की भारी गिरावट देखी जा रही है। यह तब है जब एक मीटर की गिरावट ही पूरे इकोसिस्टम को प्रभावित करती है, यह एक वैज्ञानिक तथ्य है।

भूजल स्तर में गिरावट से इकोसिस्टम पर क्या प्रभाव पड़ता है? इसका सटीक उदाहरण उत्तर प्रदेश की तमाम नदियां जो भूगर्भ जल से पोषित हैं । इनमें गोमती व उसकी सहायक नदियां शामिल है जो संबंधित नदी बेसिन क्षेत्र में अतिदोहन के कारण भूजल स्तर नीचे चले जाने से बेसफ्लो में आई भारी कमी के कारण नदियों को भूजल से मिलने वाला डिस्चार्ज काफी कम रह गया और उसका दुष्परिणाम यह हुआ की नदियों के नैसर्गिक प्रवाह में काफी गिरावट देखने को मिली। केवल नदिया ही नहीं, भूजल स्तर लगातार नीचे जाने से वेटलैंड्स, तालाब, जलाशय जो भूजल से मिलने वाले बेसफ्लो पर निर्भर करते हैं, में भी जल उपलब्धता को प्रभावित किया है। भूजल स्तर नीचे जाने ने से मृदा की नमी में भी गिरावट देखी जा रही है और नलकूपों के डिस्चार्ज में भी कमी आती है।

भूजल दोहन में पूरी दुनिया में टॉप पर: केंद्रीय भूजल बोर्ड की रिपोर्ट में पूरे देश में भूजल दोहन की कुल मात्रा प्रतिवर्ष 249 बिलियन क्यूबिक मीटर आंकी गई है। लेकिन भूजल दोहन की वास्तविकता

इससे परे है। यदि गैर- प्रतिवेदित दोहन के जमीनी आंकड़ों की गणना की जाए, तो अनुमान है कि देश में भूजल दोहन की वास्तविक मात्रा प्रतिवर्ष 450 बिलियन क्यूबिक मीटर पार कर जाएगी। इसमें गहरे भूजल स्रोतों में मौजूद वर्षों पुराना भूजल भी सम्मिलित है और उसका कोई लेखा-जोखा भी केंद्रीय भूजल बोर्ड की रिपोर्ट में नहीं किया जाता है। विभिन्न भूजल यूजर सेक्टर्स में गहरे नलकूप लगाकर भूजल का बड़े पैमाने पर दोहन किया जा रहा है। चूंकि देश में भूजल दोहन के नियंत्रण की कोई ठोस नीतिगत व्यवस्था नहीं है, इसलिए इस पर अंकुश नहीं लग पा रहा है और भूजल दोहन की सही तस्वीर सामने नहीं आ पा रही है।

पूरी दुनिया में भारत भूगर्भ जल का सर्वाधिक उपयोग करने वाले देशों में टॉप पर है और विश्व में होने वाले कुल भूजल दोहन का 25% केवल इस देश में ही किया जा रहा है। अगर राज्यों की बात करें तो देश में उत्तर प्रदेश राज्य भूजल दोहन में अव्वल है, जहां कुल दोहन का 20 फीसदी इसी राज्य में किया जा रहा है। जबकि पंजाब, हरियाणा, महाराष्ट्र, तमिलनाडु, कर्नाटक, राजस्थान, गुजरात, आंध्र प्रदेश, मध्य प्रदेश, बिहार, पश्चिम बंगाल,दिल्ली में भी बड़े स्तर पर भूजल का दोहन व उपयोग किया जा रहा है।

कृषि व औद्यानिक फसलों की सिंचाई में भूजल का उपयोग का उपयोग सबसे अधिक पंजाब, हरियाणा और उत्तर प्रदेश में किया जा रहा है। गौरतलब यह है की गन्ने की खेती में अव्वल उत्तर प्रदेश में गन्ना व शक्कर के उत्पादन में करीब 20 बिलियन क्यूबिक मीटर भूजल का उपयोग किया जा रहा है, जो एक चिंताजनक है। यह आश्चर्यजनक है कि भूजल दोहन पर नियंत्रण और भूजल की सुरक्षा के लिए केंद्रीय भूजल अथॉरिटी बनी तो है लेकिन उसका कार्य क्षेत्र केवल उद्योगों तक ही सिमटा है।

बेलगाम स्थितिः भूजल दोहन की वास्तविक स्थिति का अगर अवलोकन करना है तो केवल लखनऊ शहर का ही उदाहरण ले जहां सरकारी दस्तावेजों में पेयजल आपूर्ति में भूजल दोहन की मात्रा लगभग 36 करोड़ लीटर प्रति दिन बताई जाती है, लेकिन एक प्रारंभिक सर्वे से ज्ञात हुआ कि विभिन्न सेक्टर्स में लखनऊ शहर में रोजाना चार गुना से कहीं अधिक लगभग 180 करोड़ लीटर भूजल का दोहन ट्यूबवेल व बोरिंगों के माध्यम से बड़े पैमाने पर बेरोकटोक किया जा रहा है। कहने को उत्तर प्रदेश भूगर्भ जल प्रबंधन एवं नियमन एक्ट, 2019 राज्य में लागू है, परन्तु ग्रामीण व शहरी क्षेत्रो में भूजल के अनियंत्रित दोहन को रोक पाने में इस एक्ट का कोई भी असर नहीं दिख रहा है। दरअसल, भूजल के प्रबंधन व संरक्षण के लिए जो भी प्रयास हो रहे हैं, उनमें भूजल से जुड़े विज्ञान की अनदेखी की जा रही है। भूगर्भ जल एक अदृश्य प्राकृतिक संपदा है और यह क्षेत्र विशेष की भूगर्भीय परिस्थितियों पर निर्भर करती है। उल्लेखनीय है कि पूरे देश को भूगर्भीय स्थिति के आधार पर 42 एक्यूफर्स में बांटा गया है। हर एक एक्यूफर की भूजलीय स्थिति में भिन्नता है। ऐसे में भूजल के प्रबंधन और संरक्षण में इस वैज्ञानिक पहलू को समझना और उसके अनुसार योजनाएं तैयार कर लागू करना एक महत्वपूर्ण तथ्य है। साथ ही वर्षा के बदलते पैटर्न को भी समझने और उसके अनुसार योजना तैयार करने की आवश्यकता है।

यद्यपि, कैच दे रेन, वेयर इट फॉल्स, व्हेन ईट फॉल्स के पीछे एक बहुत मजबूत संदेश है कि हम वर्षा जल का सही ढंग से संरक्षण करें। परंतु इस संदेश के वैज्ञानिक तथ्य को नजरअंदाज किया जा रहा है। महत्वपूर्ण यह है कि वर्षा जल संरक्षण के लिए वहां की भूगर्भीय स्थितियों का आकलन करके उसके अनुसार योजनाएं बनाई जाए और इसके तकनीकी दिशा निर्देशों का पालन किया जाए। यह भी ध्यान रखना जरूरी है कि जिन क्षेत्रों में भूजल स्तर उथला है, वहां पर रिचार्ज ना कराया जाए और किसी भी प्रकार का प्रदूषण रिचार्ज विद्या के माध्यम से भूजल स्रोतों में पहुंचकर उसे प्रदूषित ना करें।

दरअसल, भूजल को लेकर यह मिथ्य है कि बारिश का सारा पानी रिचार्ज कर दिया जाए तो भूजल स्तर ऊपर आ जाएगा। सबसे बड़ी भूल यही है कि भूजल स्रोतों को समझने की कोशिश ही नहीं की जाती है। भूजल संरक्षण में वैज्ञानिक मापदंडों को प्राथमिकता पर अपनाया जाना चाहिए। भूगर्भ जल का बहाव प्राकृतिक रूप से एक्यूफर में निहित है। इसलिए क्षेत्र विशेष की एक्यूफर विशेषताओं के अनुसार ही भूजल प्रबंधन और संरक्षण की समग्र कोशिश होनीचाहिए।

एक्यूफर्स को बहाल किया जानाः भूजल के प्रबंधन में सबसे बड़ी चुनौती यह है कि सूख चुके एक्यूफर्स को उसके मौलिक स्वरूप में बहाल कैसे किया जाए? भूजल प्रबंधन की जो भी कोशिशें की जा रही है, वह प्रथक प्रथक ढंग से की जा रही है। भूजल स्रोतों की स्थिति में सुधार कितना हो रहा है इसके आकलन की कोई व्यवस्था नहीं है। संकटग्रस्त एक्यूफर्स को पुनर्स्थापित स्थापित करने के लिए एकीकृत और समग्र रूप से कार्य करना होगा। चूंकि भूजल अदृश्य संसाधन है, इसलिए भूजल के दोहन में प्रभावी कमी लाते हुए, रीसायकल, रीयूज, दक्ष सिंचाई तकनीक, रिचार्ज, सतही व भूजल का साझा उपयोग जैसे प्रयासों को एकीकृत ढंग से लागू करने के लिए मजबूत भूजल प्रबंधन प्रणाली को जमीन पर उतारना होगा।

आए सात समुंदर पार के प्रवासी

पीलीभीत के शारदा सागर जलाशय में करेंगे चार माह तक प्रवास

फोटो : कुँवर निर्भय सिंह

कुँवर निर्भय सिंह

जैसे-जैसे हिमालय पर्वत की शिवालिक श्रेणियां की तलहटी में स्थित भारत नेपाल सीमावर्ती जनपद पीलीभीत की तराई में ठंड के बढ़ती है वैसे वैसे सांता सुमंदर पार कर साइबेरियन मेहमान पक्षियों की दस्तक होने लगती है। भारत नेपाल सीमा के पास एशिया के सबसे बड़े मिट्टी के कच्चे बांध शारदा सागर जलाशय जो 22 किलोमीटर लम्बा और पांच किलोमीटर चौड़ाई में है। जिसमें उत्तर प्रदेश के कई जनपदों की सिंचाई के लिए जल संचय किया जाता है। ऐसे विशाल जलाशय में विदेशी मेहमानों के कलरव की गूंज सुनाई देने लगती है। इसके अतिरिक्त जनपद के अन्य सरोवर, झील एवं नदियां आदि भी इन साइबेरियन मेहमान पक्षियों के कलरव से गुलजार होने लगे हैं। यह मेहमान पक्षी सर्दी भर यहां रहते हैं और गर्मी के मौसम शुरू होते ही अपने वतन वापस लौट जाते हैं। यूरोप और मध्य एशिया के उच्च हिमालय क्षेत्रों से हजारों की संख्या में हर साल सर्दी के मौसम में विदेशी परिंदे शारदा सागर जलाशय पहुंचते हैं इस बार भी सर्दी का प्रभाव कुछ देर से शुरू हुआ तो अक्टूबर के अंतिम दिनों की अपेक्षा नवंबर महा के अन्त में यह विदेशी मेहमान साइबेरियन पक्षी यहां आना शुरू हो गए थे हर वर्ष की भांति इस बार भी शरद ऋतु में इन साइबेरियन पक्षियों के कलरव से पीलीभीत टाइगर रिजर्व के महोब एवं बराही वन क्षेत्र से घिरे शारदा सागर जलाशय गुंजायमान रहेगा और पर्यटकों को अपनी ओर यह पक्षी आकर्षित करेंगे।

क्या होता है प्रवासः माइग्रेशन यानी प्रवास लैटिन शब्द माइग्रेटस से आया है जिसका अर्थ होता है बदलाव इसलिए पक्षियों के द्वारा किसी विशेष मौसम में भौगोलिक बदलाव को ही माइग्रेशन नाम दिया गया है जिसका अर्थ हिंदी में प्रवास होता है प्रवास का मतलब यात्रा पर जाना या दूसरे स्थान पर जाना लेकिन यह प्रवास अपने देश तक ही सीमित नहीं होता है जहां भी इन्हें हैं अपने अनुकूल मौसम और भोजन मिल जाए वही यह प्रवास कर लेते हैं तराई की आबोहवा साइबेरियन मेहमान पक्षियों के लिए काफी मुफीद मानी जाती है ठंड की शुरुआत होती ही यह साइबेरियन मेहमान पक्षी एशिया के सबसे बड़े 22 किलोमीटर लंबे और 5 किलोमीटर चौड़े मिट्टी के बने बांध शारदा सागर जलाशय में 4 माह के लिए प्रवास पर आते हैं।

कहां से आते हैं यह मेहमान विदेशी पक्षीः ऐसा ही नहीं कि दूसरे देश के पश्चिमी भारत आते हैं बल्कि भारत के पक्षी भी दूसरे देश को जाते हैं भारत के पक्षी लगभग 10000 किलोमीटर का सफर तय करके रूस के निकट साइबेरिया पहुंचते हैं और इसी प्रकार उस देश के पक्षी भारत में आते हैं जो पक्षी भारत में आकर सर्दियां गुजारते हैं उत्तरी एशिया रूस कजाकिस्तान तथा पूर्वी साइबेरिया एवं सेंट्रल एशिया से आते हैं।

> शरद ऋतु में प्रवासी पक्षी पीलीभीत टाइगर रिजर्व के जलाशयों में भोजन और आश्रय की तलाश में आते हैं। अतिथि देवो भव : हमारी परंपरा के अनुसार इन प्रवासी पक्षियों को सुरक्षा और संरक्षण प्रदान करना प्रत्येक नागरिक का कर्तव्य है।
>
> **-नरेश कुमार,** वरिष्ठ परियोजना अधिकारी विश्व प्रकृति निधि

> उत्तरी हिमालय व तिब्बत जैसे क्षेत्रों में शरदश्रृतु में जीवन प्रतिकूलता के चलते प्रवासी पक्षी मैदानी क्षेत्रों में आने लगते है। परिस्थितियों के अनुकूल होते ही वापस जाना शुरू कर देते हैं। इन पक्षियों की सुरक्षा और संरक्षण करना हम सभी का कर्तव्य है।
>
> **-मनीष सिंह,** प्रभागीय वनाधिकारी पीलीभीत टाइगर रिजर्व

समूह में ही करते हैं माइग्रेशन: समुद्री और दुर्गम रेगिस्तानी प्रदेशों को पार करने के लिए यह मेहमान विदेशी पक्षी एक समूह में ही उड़कर प्रवास के लिए निकलते हैं इनका कोई भी पक्षी अकेला नहीं निकलता है यह प्रवासी पक्षी अनुकूल हवा देखकर स्थान बदलते हैं यदि यह एक बार माइग्रेशन शुरू कर देते हैं तो लगातार करते ही रहते हैं किसी खराब मौसम के कारण ही यह माइग्रेशन नहीं कर पाते और यह तभी उड़ान पर जाते हैं जब इन्हें लगता है कि इनके पास इतना फैट है जो इन की यात्रा के दौरान इनका साथ देगा।

हाइपरफेजिया की चपेट में आ जाते हैं यह पक्षी: हजारों किलोमीटर दूरी तय करने के लिए साइबेरियन पक्षियों को प्रवास के कई सप्ताह पहले चर्बी इकट्ठा करना होता है इसलिए यह सामान्य से अधिक भोजन करते हैं किससे बनी चर्बी कोवे बाद में अपनी लंबी यात्रा में उड़ान के लिए इस्तेमाल करते हैं किंतु कभी-कभी रास्ते दुर्गम और कष्टकारी या कोई अन्य समस्याएं हो जाने के कारण इनकी उड़ाने बाधित हो जाती हैं तो यह पक्षी हाइपरफेजिया नामक बीमारी से भी पीड़ित हो जाते हैं।

शिकारियों की भी होती है इन पर नजर: सात समुंदर पार कर शारदा सागर जलाशय में साइबेरियन पक्षियों का यहां आना शुरू हो गया वही इन मेहमान पक्षियों पर शिकार करने वालों की भी नजरें जमने लगी 4 माह के प्रवास के दौरान शिकारियों की नजरें भी इस प्राग में लग जाती हैं कि कौन से नायाब तरीके से इन पक्षियों का शिकार किया जाए।

शरद ऋतु में आनेवाले वाले यह मेहमान पक्षी: साइबेरियन क्रेन ,रेड क्राइस्ड कोचर्ड,कामन कोचर, क्रिस्लिगं,गडवाल,किससैल, ग्रेटर फ्लेमिंगो, रफ, रेड क्रेस्टेड कोचर्ड,कामन पोचार्ड, कामन कूट, कमेरिट आदि।

क्यों आते हैं यह साइबेरियन पक्षी: शीत ऋतु में प्रवासी पक्षियों के यहां बर्फ जम जाती है और हाड़ मांस को कप कपा देने वाली ठंड का प्रकोप बढ़ जाता है जिस कारण इन पक्षियों का आहार और जीना दुष्कर हो जाता है इनके आहार वाले जीव जंतु अधिक ठंड होने के कारण जमीनी सतह में दुबक कर चले जाते हैं ऐसी अवस्था में आहार और अपने जीवन को बचाने के लिए यह गर्म जलवायु वाले देश चले आते हैं जहां बर्फ नहीं जमती है और आसानी से भोजन मिल जाता है।

कैसे होता है इन पक्षियों के वायुमार्ग का निर्धारण: विदेशी पक्षियों के पैरों में रिंग टैग डालकर उनके हवाई मार्ग का पता लगाया जाता है इस रिंग का इंटरनेशनल मानक होता है सभी देश के संरक्षित केंद्रों से इन पक्षियों के बारे में रिपोर्ट इकट्ठी की जाती है इसके अलावा सैटेलाइट चिप डाली जाती है जिससे उनके हवाई मार्ग का ज्ञान हो जाता है प्रवास के दौरान यह पक्षी अपने शरीर को मौसम के अनुरूप अनुकूलित कर लेते हैं लेकिन फिर भी इन्हें कई चुनौतियों का भी सामना इन मार्गों में करना पड़ता है।

आखिर कब समझ आएगी हमें ये बात...

ये बात है उन दिनों की,
जब मैं थी छोटी सी।
नन्हे हथेलियों से गगन-भू आकृति,
सूर्य की आभा, चन्द्र की चंचलता मेरे मन को भा जाती,
वृक्षों की हरित तेहर में कहीं खो सी जाती...
फूलों की खुशबू, पपीहे की चहचहाहट मन में उन्माद सा जगाती...
फिर जल की सुरमयता इन्हें शान्त कर जाती।
प्रकृति की अनुपम अविश्वसनीय सुंदरता, विचारों को एक नया आयाम देती,
हम प्रकृति से हैं, प्रकृति हमसे नहीं ये बात समझ आती...
पर जब बड़ी हुई हूं अब...
खो रहे वो प्यारे मंजर...
खेत-खलिहान हो रहा बंजर...
वन-वनस्पति मानों हुए ईटों के अरण्य...
जल कल के अस्तित्व की लहर हो रही छिन्न-भिन्न...
वायु में विष और ऊर्जा के अपशिष्ट से हम कर रहे अपना ही ह्रास
धुएं का बादल और ग्रीनहाउस की गैस से हो रहा हर दिन ही विनाश,
प्रदूषण की धार कर रही धरती को त्रास...
हम प्रकृति से हैं, प्रकृति हमसे नहीं, आखिर कब समझ आएगी हमें ये बात।

अपूर्वा सिंह
प्रोजेक्ट मैनेजर
सावन

आईटीएम स्कूल आफ आर्किटेक्चर एंड टाउन प्लानिंग, बीकेटी, लखनऊ के प्रिंसिपल और वरिष्ठ वास्तुविद प्रोफेसर सुनील श्रीवास्तव से साक्षात्कार

सतत विकास आज के समय की जरूरत

दुनिया में जिस तेजी से विकास हो रहा है, उसी तेजी से पर्यावरण का विनाश भी हो रहा है। आज विकास की जो गति है उसे अंधाधुंध की श्रेणी में रखा जाता है। विकास को रोका नहीं जा सकता और पर्यावरण का विनाश होगा तो मानव जाति भी नहीं बचेगी। ऐसे में विकास और पर्यावरण के बीच कैसे संतुलन बनाया जाए, इस पर जाने-माने वास्तुविद् प्रो. सुनील श्रीवास्तव से 'पर्यावरण चेतना' की बातचीत के प्रमुख अंश:

सबसे पहले तो सतत विकास (सस्टनेबल डेवलपमेंट) को परिभाषित करें। यह सामान्य विकास से किस तरह भिन्न है? पिछले तीन दशकों में अंधाधुंध विकास ने जिस तरह प्रकृति का विनाश किया है, उसमें सतत विकास की अवधारणा पर विचार करना कितना आवश्यक है ?

-ऐसा विकास जो आज की पीढ़ी की आवश्यक जरूरतों को पूरा करने के साथ भावी पीढ़ी की जरूरतों और हितों पर दुष्प्रभाव न डाले, ही सतत विकास है। आज हो यह रहा है कि अंधाधुंध विकास की दौड़ में लगकर हम भावी पीढ़ी की चिंता नहीं करते। आज विकास में आर्थिक विकास ही मुख्य है। इन्फ्रा, इंडस्ट्री की वजह से जिसके पास ज्यादा संपत्ति है, जिसके पास सभी सुख-सुविधाएं मौजूद हैं, वह विकसित है। इन्हें जितना चाहिए उतना पानी, साफ हवा मिल रही है। अंधाधुंध विकास में हवा प्रदूषित होगी तो उसका प्रभाव दूसरों पर पड़ेगा। वे उससे अछूते नहीं रह पाएंगे। आज विकास के नाम पर पेड़ काटे जा रहे हैं, ग्लोबल वार्मिंग बढ़ती जा रही है। आपका माइक्रो-क्लाइमेट (छोटे क्षेत्र अर्थात मुहल्ले) भी बहुत प्रभावित हो रहा है।

● आप विकास के पांच माडलों की अक्सर चर्चा करते हैं। विकास के वे पांच मॉडल क्या हैं? इसमें कौन-सा मॉडल आपकी दृष्टि में सबसे अच्छा है ? और क्यों ?

-विकास के पांच माडल हैं-ब्लू, रेड, पिंक, यलो और ग्रीन। ब्लू माडल है कैपिटलिज्म अर्थात जो संयुक्त राज्य अमेरिका में है। रेड माडल सोशलिज्म का वह माडल है, जो सोवियत संघ में लागू था। पिंक माडल वह माडल है, जिसमें मिश्रित अर्थव्यवस्था होती है, जो भारत और तीसरी दुनिया के तमाम देशों ने अपनाया। विकास के इस माडल में अस्पताल, ट्रेन जैसे बड़े परिवहन आदि क्षेत्रों में सरकार और निजी क्षेत्र की मिलीजुली भागीदारी होती है। यलो माडल वह माडल है, जो विज्ञान और टेक्नोलॉजी को विकास के टूल के तौर पर अपनाता है, यह माडल जापान ने अपनाया है। जबकि ग्रीन माडल वह माडल है, जिसकी आज समूची दुनिया को जरूरत है। ग्रीन माडल आत्मनिर्भरता और पर्यावरण-निर्भरता (ईको-रिलायंस) का माडल है, जिसमें हम इस बात पर दृढ़ रहते हैं कि हम न प्रदूषण फैलाएंगे न ही किसी को फैलाने देंगे। विकास का यह माडल ही आज की तारीख में सबसे अधिक अच्छा है।

● वर्ष 2015 में संयुक्त राष्ट्र ने सतत विकास के लक्ष्य की प्राप्ति के लिए एक एजेंडा घोषित किया था। वह क्या था ? कृपया संक्षेप में बताएं।

-बीते 2015 में 25 से 27 सितंबर तक न्यूयार्क में दुनिया के 150 से अधिक देशों के प्रतिनिधि एक सम्मेलन में एक मंच पर इकट्ठा हुए। उन्होंने वर्ष 2030 तक सतत विकास के लक्ष्य की प्राप्ति के लिए एक एजेंडा तय किया, जिसमें दुनिया के

चंडीगढ़ का विश्व प्रसिद्ध रॉक गार्डेन रियूज की जीवंत मिसाल है। इस अद्भुत गार्डेन को आर्किटेक्ट नेक चंद ने बनाया था।

हर व्यक्ति को स्वस्थ रहने के लिए उचित अवसर मुहैय्या कराने का संकल्प लिया गया था। वस्तुतः 2030 का एजेंडा गरीबी को खत्म करने, पृथ्वी का संरक्षण, असमानता को खत्म करने, शांति और समृद्धि को बढ़ावा देने और हमारी प्रकृति को स्वस्थ रखने के लिए दुनिया द्वारा बनाया गया रोडमैप है। इस सम्मेलन में संयुक्त राष्ट्र ने उस एजेंडे को अंगीकार किया, जिसमें सतत विकास के 17 लक्ष्य रखे गए थे। ये प्रत्येक देश के लिए बाध्यकारी थे, वे देश चाहे विकसित हों, विकासशील या फिर अल्प-

● हमें इस्तेमाल की गई चीजों का दुबारा इस्तेमाल करना चाहिए

● घरों का 80% कूड़ा सड़ाकर खाद बनाई जा सकती है

विकसित। सतत विकास के जो 17 लक्ष्य तय किए गए थे, उनमें गरीबी का खात्मा, लिंग-समानता की प्राप्ति, जलवायु परिवर्तन से लड़ना, पृथ्वी और प्राकृतिक स्रोतों की रक्षा को लेकर विश्वस्तरीय संयुक्त प्रयासों को बढ़ावा देना शामिल था।

● आप 5-आर वाले कांसेप्ट के बारे में क्या कहेंगे, जिनसे पर्यावरण संरक्षण में बेहतर मदद मिल सकती है?

-हमारा फाइव-आर कान्सेप्ट है-रिजेक्ट, रिड्यूस, रियूज, रिसाइकल और रॉट। अगर हम इस फाइव-आर को अपनी आदत में डाल लें तो पर्यावरण संरक्षण में बहुत मदद मिलेगी। ये हमारे दैनिक जीवन से जुड़ी हुई चीजें हैं, जिनके प्रति हमें गंभीर होना ही चाहिए। जैसे रिजेक्ट और रिड्यूस को लीजिए-हम पहले अपनी किसी आवश्यकता को पहले रिजेक्ट करें। जैसे-हमें घर बनाना है, तो इस पर पुनर्विचार करें। बिना घर बनाए अगर किराये के घर में रहकर काम चल जाए तो ऐसा करें। अगर लगता है कि नहीं, घर बनाना जरूरी ही है तो अपनी इस आवश्यकता को रिड्यूस करें अर्थात छोटा घर बनाएं। इसी तरह कोई पार्टी करने की आवश्यकता है तो पहले उसे रिजेक्ट करें अर्थात न करने की सोचें। अगर लगता है कि पार्टी करना जरूरी है तो छोटी पार्टी करें। इस पार्टी को रिड्यूस करने की सोचें। अर्थात अगर एक हजार लोगों को बुलाना चाहते हैं तो प्रयास करें कि तीन सौ लोगों को बुलाने से काम चल जाए, तो अच्छा रहे।

रियूज का मतलब है कि इस्तेमाल हो चुके सामान का दुबारा इस्तेमाल करें। हम इस्तेमाल की गई चीजों को बहुत तरीके से पुनः इस्तेमाल कर सकते हैं, बस उस दिशा में एक बार सोचना तो शुरू करें। चंडीगढ़ का विश्व प्रसिद्ध रॉक गार्डेन रियूज की जीवंत मिसाल है। इसी तरह, रिसाइकल में हमें लोहा, तांबा, एल्युमिनियम सभी का इस्तेमाल करना चाहिए। लकड़ी को हम रिसाइकल नहीं कर सकते तो उसका रियूज करें। पॉलिथीन का रिसाइकल नहीं हो सकता तो उसका इस्तेमाल सड़क बनाने में करें। पराली जलाने का मुद्दा एक बड़ा मुद्दा है। उससे हम कंप्रेस्ड बोर्ड बना सकते हैं। यह रियूज का बेहतरीन उदाहरण है। हमारे पावर प्लांट्स से फ्लाई-ऐश बहुत निकलती है। गवर्नमेंट आफ इंडिया ने यह प्रावधान किया है कि इस फ्लाई-ऐश का कम से कम 25 प्रतिशत यूज करना है। ऐसे में इसका इस्तेमाल ईंटें बनाने में किया जा रहा है। इसे पीपीसी माडल की सीमेंट में भी इस्तेमाल किया जाता है।

अब हम आते हैं पांचवें आर यानि रॉट यानि सड़ाने पर। इसका फंडा यह है कि अनुपयोगी चीजों को सड़ाकर भी हम पर्यावरण संरक्षण में महती भूमिका निभा सकते हैं। हमारे घरों से जो रोजाना कूड़ा निकलता है, उसका 80 प्रतिशत सड़ाया जा सकता है। उससे बेहद उपयोगी खाद बन सकती है। हमारे घरों में हर व्यक्ति औसतन आधा किलो कूड़ा रोजाना निकालता है। इसमें प्याज, आलू, मटर के छिलके, मिठाई के डब्बे, बची हुई दाल जैसी चीजें शामिल हैं। जो कूड़ा हमारे घरों से निकलता है उसमें गीले और सूखे कचरे का प्रतिशत 80: 20 का रहता है। 80 प्रतिशत कूड़े को अगर हम सड़ा दें और बाकी 20 प्रतिशत कचरे को रिसाइकल में डाल दें (वैसे 100 प्रतिशत कूड़ा रिसाइकल नहीं होता) तो यह पर्यावरण-फ्रेंडली कार्य होगा। अगर इस प्रासेस को डिसेंट्रलाइज्ड कर दिया जाए तो यह बेहतर होगा। लखनऊ में कानपुर रोड पर नाबार्ड ने अपनी कालोनी में ऐसा प्रयोग किया है, जिसमें कालोनी के निवासी जो कूड़ा डालते हैं, वह एक महीने बाद खाद की शक्ल में निकलता है। ऐसे प्रयोग अन्य स्थानों पर भी किए जाने चाहिए।

● आप गांधीजी के उस उद्धरण को अक्सर उद्धृत करते हैं कि पृथ्वी मनुष्य की जरूरतों को तो पूरा कर सकती है लेकिन उसके लालच को नहीं...। यह बात आज किस हद तक सही है ? थोड़ा विस्तार से बताएं।

-यह बात सौ प्रतिशत सही है। जरूरत मानव की प्रवृत्ति है लेकिन इस प्रवृत्ति पर स्व-नियंत्रण की जरूरत है। बच्चा कोई भी चीज दोनों हाथ से उठाता है। उस समय समाज और परिवार के सदस्य उसे बताते हैं कि बेटा उतना ही ले जितनी की जरूरत है। क्योंकि लालच का कोई अंत नहीं है। हम आवश्यकता से अधिक लेंगे तो किसी न किसी का हक छीनेंगे। ऐसे में संसाधनों की शॉर्टेज तो होगी ही। हमारे लालच का कोई अंत नहीं है। उसका परिणाम केवल बैंक बैलेंस है।

- **आप जब कहते हैं कि प्रकृति पर मनुष्य अपनी दादागिरी चला रहा है, तो इससे आपका क्या आशय होता है ?**

-मानव विकास के नाम पर प्रकृति पर अपनी दादागिरी ही तो दिखा रहा है। मनुष्य विकास के नाम पर अनियोजित विकास कर रहा है। खेती की जमीन पर इंडस्ट्री लगा रहा है, जबकि बंजर जमीन बेकार पड़ी है। यही तो अनियोजित विकास है। इसी तरह, नदियों का प्रवृत्ति है बहना लेकिन मनुष्य उन पर बांध बना दे रहा है। इसका नुकसान तो हमें उठाना ही पड़ेगा। बिहार में कोसी नदी ने 300 वर्ष बाद अपना पाट बदल लिया। नेचर खुद को बैलेंस करती है। इसीलिए केदारनाथ जैसी आपदा आती है। मनुष्य की प्रकृति पर इसी दादागिरी का परिणाम है कि सारे मौसम बेतरतीब हो गए। चाहे वह गर्मी हो या जाड़ा या फिर बरसात। सभी का सिस्टम गड़बड़ा गया है। प्रकृति में जब असंतुलन पैदा होता है तो वह अपने आपको संतुलित करती है। जिसका नतीजा हमें बाढ़, जल-प्रलय और दूसरी प्राकृतिक आपदाओं के रूप में देखने को मिलता है।

- **लोग प्रकृति के संरक्षक या केअर-टेकर की तरह काम करें, यह भावना लोगों में कैसे लाई जाए ? उन्हें कैसे बताया जाए कि अगर अभी भी वे नहीं चेते तो आने वाली पीढ़ी उन्हें कभी माफ नहीं करेगी ?**

-लोगों में प्रकृति के संरक्षक की भावना उन्हें इस मामले में एजुकेट करके लाई जा सकती है। इसके लिए सबसे पहले जरूरी है कि हमारे समाज के जो सांभ्रांत व्यक्ति हैं, जिन्हें लोग फालो करते हैं, वे इसे अपने निजी जीवन में फालो करें। एजूकेट करने में भी हमें यूथ-गर्ल्स को एजूकेट करने पर अधिक ध्यान देना चाहिए। अगर यूथ गर्ल्स आपकी बात से प्रभावित हो जाएंगी तो समाज में अधिक तेजी से सुधार होगा। क्योंकि बच्चों को प्राथमिक शिक्षा मां देती है। मां अगर बच्चों को यह समझाए कि वे जरूरत भर का ही इस्तेमाल करें, कोई चीज बर्बाद न करें तो इसे बच्चे अधिक अच्छी तरह से समझेंगे। अगर किसी यंग गर्ल की कंडीशनिंग इस प्रकार की हुई होगी तो वह अपने हस्बैंड को भी सुधार देगी।

लोगों को इस बात के लिए भी एजुकेट किया जाना चाहिए कि वे तालाब बचाएं। यह बेहद दुखद है कि हमारा ग्राउड वाटर लेवल लगातार नीचे जा रहा है। इसका कारण यह है कि हम ग्राउंड को रिचार्ज नहीं कर पा रहे हैं। हमारे आसपास से वेटलैंड एरिया खत्म होते जा रहे हैं। पहले तालाब बहुतायत में होते थे तो उनसे ग्राउंड वाटर रीचार्ज होता था। उस पर पशु पानी पीते थे। लोग कपड़े धोते थे। तालाब की सड़ी मिट्टी से घर बना लिया करते थे। तालाब से मिट्टी निकाली जाती थी तो उसकी डिसिल्टिंग हो जाती थी। ऐसा हजारों साल से चला आ रहा था। अब मकान कच्चे नहीं होते, उन्हें पक्का कर दिया गया है। बारिश का पानी पहले कच्ची जमीन में जाता था, अब वह सड़क पर बहता है। वह सीधे तालाब में जाता है। चूंकि तालाब में जगह नहीं है तो वह ओवरफ्लो करता है। लखनऊ जैसे शहर में सॉफ्ट-सरफेस बचे ही नहीं हैं। ऐसे में भगवान तो पानी दे रहा है पर वह समुद्र में जा रहा है। यहां लगभग 900 एमएम बरसात (अर्थात तीन फुट पानी) होती है लेकिन यह सारा पानी नालियों में चला जाता है। नालियों से गोमती में। गोमती से गंगा में, गंगा से बंगाल की खाड़ी में। हमें शुद्ध जल मिला तो पर हम उसे संभाल नहीं पाए। अगर हमने उसे संभाल लिया होता तो हमारा भूजल स्तर चार्ज होता। लखनऊ में पहले करीब एक हजार तालाब था लेकिन इन सब पर कब्जा हो गया। सब पट गए। इन्हें पुनर्जीवित करने की आवश्यकता है। लेकिन इसके लिए एक मास्टरप्लान या ब्लूप्रिंट होना चाहिए। अगर हम अभी भी नहीं चेते तो भविष्य में हमारे सामने बहुत बड़ा जल संकट खड़ा होने वाला है। हमें अपने घरों के लॉन में फ्रूट ट्री लगाने चाहिए। इससे हमें फल तो मिलेंगे ही लॉन में पानी कम खर्च होगा।

- **कभी विश्व का सबसे प्रदूषित शहर था चीन का बीजिंग**
- **आज लखनऊ है बीजिंग से पांच गुना अधिक प्रदूषित**

- **पर्यावरण को स्वच्छ रखने के लिए उपभोग को कैसे कम किया जाए ? कौन-से ऐसे प्रयास किए जाएं, जिनसे पर्यावरण स्वस्थ और स्वच्छ रहे ?**

-इसके लिए हमें उपभोग को कम करना होगा। हमें पर्यावरण के पांचों तत्वों (क्षिति, जल, पावक, गगन, समीरा) के संरक्षण पर ध्यान देना होगा। हमें क्षिति (धरती) का संरक्षण करना होगा। हम जानते हैं कि हमारी धरती की सवा फीट मिट्टी तैयार होने में हजार साल लग जाते हैं। ऐसे में ये मिट्टी बहे न, इसके लिए जरूरी है कि हम पौधरोपण करें। इससे हमारी धरती माता का स्वास्थ्य अच्छा रहेगा। जितने नाले नदी में जा रहे हैं, उनमें केवल बरसाती पानी के अलावा कुछ नहीं जाने दें। या नदियों के किनारे कंबाइंड ईटीपी बनाएं। एसटीपी को लोकल लेवल पर डिसेंट्रलाइज्ड करें। पर्यावरण के तीसरे तत्व पावक को देखें तो हमें सौर ऊर्जा और पवन ऊर्जा पर ध्यान देना होगा। गगन को बचाने के लिए हमें अपनी ओजोन लेयर की रक्षा करनी होगी। पेड़ खूब लगाना होगा। ऐसी क्रियाओं को हतोत्साहित करना होगा, जिनसे मीथेन का उत्पादन होता हो। समीर अर्थात हवा की शुद्धता के लिए हमें इलेक्ट्रिकल व्हीकल को बढ़ावा देना होगा। साइकिल से चलना होगा। आज चीन का उदाहरण लीजिए। कुछ दिनों पहले बीजिंग विश्व का सबसे अधिक प्रदूषित शहर था। उन्होंने शहर में लगे सभी उद्योगों को बंद कर दिया। वहां कृत्रिम बरसात करवाई, जिससे वातावरण की धूल बैठ गई। नई गाड़ियों के लिए परमीशन देना बंद कर दिया। इलेक्ट्रिक वाहनों और साइकिल सवारी पर जोर दिया। नतीजा सामने है। आज बीजिंग का एक्यूआई (वायु गुणवत्ता सूचकांक) 60 से 65 के बीच है। जबकि हमारे लखनऊ शहर का एक्यूआई 300 से 350 तक है। राजधानी के लालबाग क्षेत्र का एक्यूआई तो हमेशा 350 से ऊपर ही रहता है। इस तरह कभी विश्व के सबसे प्रदूषित शहर रहे बीजिंग से हमारा लखनऊ पांच गुना से अधिक प्रदूषित है।

दुर्भाग्यपूर्ण यह है कि हम एक्यूआई की इस भयावह स्थिति का एहसास ही नहीं कर पा रहे हैं। यह एक समस्या है, सबसे पहले तो इसको आईडेन्टीफाई करने की आवश्यकता है। पहले जब हम यह एहसास करेंगे कि हम समस्या का सामना कर रहे हैं, तभी तो हम उसके समाधान के लिए प्रयास करेंगे।

- **विकास को रोका तो जा नहीं जा सकता। ऐसे में जब मामला विकास बनाम पर्यावरण हो जाता है, तो उसका प्रकृति के साथ संतुलन कैसे बनाया जाए ?**

-इसके लिए सस्टनेबल डेवलपमेंट का 3ई मॉडल सबसे उपयुक्त है। 3ई अर्थात इकोनॉमी, इक्विटी और इकोलॉजी। इकोनॉमी का अर्थ है कि संसाधनों का समुचित ढंग से उपयोग करके धनोपार्जन किया जाए। एक्विटी का अर्थ है-जियो और जीने दो। सबके साथ समान और सम्मानजनक व्यवहार हो। जबकि इकोलॉजी का अर्थ है कि हर जीव का पर्यावरण के साथ अच्छा संबंध हो। इन तीनों के बीच सामंजस्य बनाकर चलना अगर आ गया तो उस विकास का प्रकृति के साथ अच्छा संतुलन रहेगा।

- **प्राकृतिक संसाधनों के उचित दोहन के लिए क्या किसी नए कानून के बनाए जाने की जरूरत है या मौजूदा कानून पर्याप्त हैं ?**

-हमारे मौजूदा कानून पर्याप्त हैं। जरूरत है उन्हें सही ढंग से लागू करने की। उनका अनुपालन अगर सुनिश्चित हो जाए तो काफी समस्याएं स्वतः हल हो जाएं।

- **औद्योगीकीकरण का सतत विकास से क्या रिश्ता है ? विकास के समानांतर चलने वाले प्रकृति संरक्षण के उपाय क्या हो सकते हैं ?**

-सद्गुरु जग्गी वासुदेव ने कहा है कि नदियों के दोनों तरफ आधा किलोमीटर तक फ्रूट ट्री लगा दीजिए, बाढ़ आनी बंद हो जाएगी। इससे नदियों में सिल्ट नहीं बनेगी। ऐसे में पानी का वेग कम होगा। लोगों को फल खाने को मिलेंगे। सद्गुरु का यह सुझाव अच्छा है। हमें इस पर विचार करना चाहिए। नदियों के किनारे 200 मीटर तक तो निर्माण पर वैसे भी प्रतिबंध है।

हम सोसाइटी में पॉम और खजूर के पेड़ लगाते

हैं। इनकी जगह हम फ्रूट ट्री लगाएं। फल खाने को मिलेंगे। फल की अधिकता होगी तो न केवल गेहूं, चावल की खपत कम होगी बल्कि हम स्वस्थ भी रहेंगे। हम अभी जो कमा रहे हैं, उसे डॉक्टर को देने के लिए कमा रहे हैं। हमें सुबह योग करना चाहिए। इसके अलावा समय से सोना और समय से उठना भी जरूरी है। जो प्रकृति का प्राकृतिक चक्र है, उसे हमें नहीं तोड़ना चाहिए। बाबा रामदेव ने हमें योग सिखा दिया। इससे पब्लिक हेल्थ की स्थिति सुधरी। ऐसे में हम प्लांट्स की जगह पेड़ लगाएं। लॉन मेंटेन करने में पानी बर्बाद न करें। पेड़ लगा लें। रेनवाटर हार्वेस्टिंग पर जोर दें। जल का इस्तेमाल कर रहे हैं तो उसको रिचार्ज भी करें। बिजली खर्च कर रहे हैं तो नॉन-रिन्यूएबल एनर्जी की तरफ भी जाएं। लोग शिक्षा, रोजगार, अच्छे स्वास्थ्य के लिए गांवों को छोड़कर शहरों में आ रहे हैं। अगर हम ये सुविधाएं गांवों में पहुंचा दें तो शहरों की तरफ लोगों का पलायन रुकेगा। डॉ. एपीजे अब्दुल कलाम ने कान्सेप्ट दिया था-प्रोविजन आफ अरबन एमेनिटीज टू रूरल एरियाज। अर्थात शहरों की सभी सुविधाएं गांवों को दे दो। हमें इस तरफ अधिकाधिक ध्यान देना चाहिए।

● **सतत विकास को आगे बढ़ाने में स्वयंसेवी संगठनों की भूमिका को आप किस तरह देखते हैं?**

-स्वयंसेवी संगठन समस्याओं के बारे में जो चर्चा कर रहे हैं, वह वातानुकूलित कमरों में बैठकर कर रहे हैं। उन्हें इन कमरों से निकलकर फील्ड में जाना होगा। उन्हें प्राइमरी डेटा कलेक्ट करना होगा। लोगों को एजूकेट करना होगा। आज आवश्यकता इस बात की है कि स्वयंसेवी संगठनों के लोग लोगों के बीच जाएं और उनकी इस बात के लिए काउंसिलिंग करें कि उन्हें इतने बड़े मकान की क्या जरूरत है, छोटा मकान बनाएं। स्वयंसेवी संगठनों को लोगों को यह बताना चाहिए कि उन्हें कितना विकास करना है, यह जान लें। अनियोजित विकास को न अपनाएं। आज हो यह रहा है कि लोग दूसरों को दिखाने के लिए पैसा जमा कर रहे हैं ताकि खूब खर्च करें और उसकी सेल्फी और फोटो डालें।

● **हमारे शहरों को लेकर इतने सारे मास्टर-प्लान्स बनते हैं, फिर भी नागरिक समस्याएं जस की तस रहती हैं। इन शहरों को देखकर नहीं लगता कि इन्हें प्लान करके बसाया गया है। इन मास्टर-प्लांस में आखिर क्या कमी होती है, जिससे ये सफल नहीं होते ?**

-हमारे शहरों के मास्टर-प्लांस इस लिए असफल रहते हैं, क्योंकि ये भारतीय शहरों की जरूरतों के मुताबिक बनते ही नहीं हैं। ये प्लान वेस्टर्न कान्सेप्ट्स पर बनाए जाते हैं। वेस्टर्न देशों में रेजिडेंशियल, कामर्शियल, इंडस्ट्रियल, इंस्टीट्यूशनल बिल्डिंग्स अलग-अलग होती हैं, इसलिए ये प्लान वहां सफल रहते हैं। हमारे देश में तो 'नीचे दुकान ऊपर मकान' वाला कान्सेप्ट चलता है। हमारे यहां गृहस्वामी यह चाहता है कि उसके घर के भवन के आगे या नीचे उसकी दुकान, आफिस या बिजनेस प्लेस हो। भवन के पीछे या ऊपर वह खुद परिवार के साथ रहे। जहां ऐसी मानसिकता हो, वहां पर वेस्टर्न कान्सेप्ट्स वाले मास्टर-प्लांस भला कैसे सफल हो सकते हैं ? फिर पश्चिमी देशों की जनसंख्या भी हमारे मुकाबले बहुत कम है। दरअसल, हमारे देश में मिक्स्ड लैंडयूज वाले प्लान्स की जरूरत है, जहां घर और व्यवसाय साथ-साथ हों।

अलीगढ़ के ताला उद्योग और बनारस के साड़ी उद्योग को आप उदाहरण के तौर पर देख सकते हैं। यहां 'नीचे दुकान ऊपर मकान' वाला कान्सेप्ट ही चलता है। इसी से जुड़ी दूसरी बात मैं यह कहना चाहूंगा कि इस मामले में सरकारी नीतियां लोक-केंद्रित होनी चाहिए। आज जो शहरों में इतनी अवैध कालोनियां बन रही हैं वे इसलिए भी बन रही हैं, क्योंकि लोगों की क्षमता ऐसी नहीं है कि वे अप्रूव्ड या नियमित कालोनी के मूल्य को वहन कर सकें। इसलिए विकास प्राधिकरणों और आवास विभाग से जुड़ी विभिन्न एजेंसीज को चाहिए कि वे ऐसे मकान बनाएं, जिनकी कीमत को सामान्य लोग अफोर्ड कर सकें।

> ● **हमारे यहां 'नीचे दुकान ऊपर मकान' वाला कान्सेप्ट चलता है**
>
> ● **सामान्य लोग अफोर्ड कर सकें ऐसी कीमत के मकान ज्यादा बनें**

● **हमारे शहरों में यातायात, ड्रेनेज सिस्टम, बिजली आदि सुविधाएं पर्यावरण के अनुकूल कैसे बन सकती हैं ?**

-यातायात के लिए सरकार को रैपिड ट्रांसपोर्ट सिस्टम पर अधिक काम करना चाहिए। जैसे, उसे मेट्रो का शहर में अधिक से अधिक विस्तार करना चाहिए। इसके अतिरिक्त ट्रैफिक को वनवे कर देना चाहिए। इसके साथ ही सड़कों के किनारों पर पार्किंग की व्यवस्था करनी चाहिए, जिससे जाम नहीं लगेगा। हमारे यहां कई लेन की सड़कें बेतरतीब ढंग से बना दी जाती हैं, इस कारण से भी जाम लगता है। यहां लेन-डिमार्केशन का काम ठीक ढंग से हो जाए, इसके साथ ही लेन-ड्राइविंग को लेकर सख्ती दिखाई जाए तो यह समस्या नहीं रहेगी। जाम कम लगेगा तो यह हमारे पर्यावरण के हित में होगा। जहां तक ड्रेनेज सिस्टम की बात है तो ड्रेनेज (नालियां) के किनारों को पक्का बनाने का जो काम हम कर रहे हैं, उसे तुरंत बंद कर देना चाहिए। इससे नालियों के आसपास सॉफ्ट सरफेस एरिया बन सकेगा। इसके अलावा नालियों में ग्रिड कैचर (कंकड़-पत्थर रोकने के लिए लगाई जाने वाली जाली) लगाए जाने चाहिए। इसी तरह इलेक्ट्रिकल सस्टेनिबिलिटी के लिए सोलर पैनल, विंड टरबाइन्स, बायोगैस प्रोडक्ट्स का इस्तेमाल बढ़ाया जाना चाहिए। इसके अलावा हम अधिक से अधिक एलईडी बल्ब और फैन इस्तेमाल करें। इसके साथ बिल्डिंग का तापमान कम करने के लिए साउथ वाल, वेस्ट वाल और छत का ट्रीटमेंट करवाएं। इससे बिल्डिंग में गर्मी कम आएगी, तो बिजली का खर्च कम होगा, जो हमारे पर्यावरण के अनुकूल होगा।

● **बड़े शहरों में हम थ्री या फोर-टियर ग्रीनबेल्ट योजना को कैसे लागू कर सकते हैं, ताकि ये हमारी भविष्य की पीढ़ी के लिए ऑक्सीजन क्षेत्र का काम कर सकें ?**

-ऐसा तभी हो पाएगा जब हम अपने घरों में अधिक से अधिक ओपन-स्पेस बढ़ाएंगे। हम अगर अपनी जमीन का हर इंच मकान बनाने में इस्तेमाल करेंगे तो ऐसा नहीं हो पाएगा। हमें घरों में ओपन-स्पेस छोड़ने के साथ-साथ कालोनियों और टाउनशिप में अधिक से अधिक ओपेन स्पेस (खाली जगह) छोड़नी होगी। इसके लिए कालोनियों में ग्रीन एरिया छोड़नी होगी, पार्क बनाने होंगे। सड़कों के दोनों तरफ या बीच में (जहां भी हो पाए) ग्रीन बेल्ट छोड़नी होगी, तभी हमारे और हमारी भावी पीढ़ी के लिए ऑक्सीजन क्षेत्र उपलब्ध हो पाएगा। सरकारी निर्माण एजेंसियों को चाहिए कि वे जो भी टाउनशिप बनाएं, वहां कम से कम दो सौ मीटर चौड़ी ग्रीन बेल्ट जरूर छोड़ें। इससे क्षेत्र में ऑक्सीजन की कभी कमी नहीं रहेगी।

● **कोई खास बात जिसे आप पाठकों को बताना चाहें...।**

-कुछ चीजें अगर सरकार के स्तर पर की जाएं तो पर्यावरण संरक्षण की दिशा में काफी कुछ सुधार हो सकता है। इसे आप सरकार को मेरा सुझाव भी मान सकते हैं। सरकार को एक पब्लिक ट्रांसपोर्ट पॉलिसी घोषित करनी चाहिए। इसमें सरकार अधिक से अधिक पब्लिक ट्रांसपोर्ट देने के साथ व्यक्तिगत स्तर पर उपभोक्ताओं की मांग को हतोत्साहित करने वाली पालिसीज बनानी चाहिए। जैसे व्यक्तिगत वाहनों पर टैक्स अधिक लगा दिया जाए। वाटरवेज ट्रांसपोर्ट को बढ़ावा दिया जाना चाहिए। इसी तरह फ्रेट कॉरीडोर को अलग कर देना चाहिए। इससे जो वाहन दस घंटे में पहुंचता होगा, वह सात घंटे में ही पहुंच जाएगा। डीजल-पेट्रोल की बचत होगी। वायु प्रदूषण कम होगा।

इसी तरह नॉन-रिन्यूबल एनर्जी को अधिक से अधिक प्रोत्साहित किया जाना चाहिए। घर-घर सोलर मिशन अच्छा चल रहा है। इसी तरह सरकार एअरकंडीशनर पर टैक्स बढ़ा दे। अस्पतालों और सार्वजनिक स्थलों पर लगने वाले एअरकंडीशनरों को इस टैक्स से छूट दी जाए। इससे उपभोक्ताओं की मांग को रिड्यूस किया जा सकता है। आर्किटेक्ट्स ऐसे घर बना सकते हैं, जिसमें एसी लगाने की जरूरत ही न हो। ऐसे आर्किटेक्ट्स को प्रोत्साहित किया जाना चाहिए। ऐसे घरों को अधिक से अधिक बनवाना चाहिए। कुल मिलाकर सरकार को ऐसा करना चाहिए जिससे लोग मिनिमल (कम से कम में काम चलाना) को अपनाएं। इसी तरह बिजली की फिटिंग-वायरिंग में आधुनिक टेक्नालोजीज का प्रयोग किया जाना चाहिए। जिसमें बिजली की रोशनी जरूरत के मुताबिक घटती-बढ़ती है। न जरूरत होने पर बुझ भी जाती है।

KIDS corner

कहानी

भालू और दो दोस्त

दो करीबी दोस्त जंगल से गुज़रने वाले एकांत और खतरनाक रास्ते पर चल रहे थे। जैसे–जैसे सूरज ढलने लगा, वे डरने लगे लेकिन उन्होंने एक दूसरे का साथ नहीं छोड़ा। अचानक उन्होंने देखा कि सामने से एक भालू आ रहा है, एक दोस्त सबसे नज़दीकी पेड़ की ओर दौड़ा और फटाफट ऊपर चढ़ गया । लेकिन दूसरा पेड़ पर

चढ़ना नहीं जानता था इसलिए वह मृत होने का नाटक करते हुए ज़मीन पर लेट गया। भालू ज़मीन पर पड़े लड़के के पास गया और उसके सिर के चारों ओर सूँघने लगा। लड़के को मरा हुआ जानकर, भालू आगे बढ़ गया। पेड़ पर चढ़ा दोस्त नीचे उतरा और उसने अपने दोस्त से पूछा कि भालू ने उसके कान में क्या कहा। उसने जवाब दिया, 'उन दोस्तों पर कभी भरोसा मत करना जो तुम्हारी परवाह नहीं करते हैं।

कहानी से मिली सीखः सच्चा मित्र वही होता है जो मुसीबत में काम आए।

निष्कर्षः नैतिक शिक्षा देने वाली यह छोटी कहानियाँ आपको आपके बच्चों के साथ अच्छा वक्त बिताने में मदद करती हैं और साथ ही उन्हें महत्वपूर्ण सीख भी देती हैं। अगली बार जब आप बच्चों का मनोरंजन करना चाहते हैं, तो नैतिक शिक्षा देने वाली कहानियाँ हमेशा एक बेहतरीन विकल्प है।

'द गोल्डन टच'

यह एक बहुत ही लालची और अमीर आदमी की कहानी है जो एक दिन संयोगवश एक परी से मिला। परी के बाल एक पेड़ की कुछ शाखाओं में फंस गए थे, जैसे ही उस अमीर आदमी को समझा कि यह और पैसा कमाने का मौका है, उसने परी से मदद के बदले में उसकी एक मांग पूर्ण करने के लिए कहा। उसने कहा कि, 'मैं जिस भी वस्तु को छुऊं, वह सोने की बन जाए', और कृतज्ञता से भरी उस परी ने उसकी इच्छा पूरी कर दी।

वह लालची इंसान सभी पत्थरों और कंकड़ों को छूकर उन्हें सोने में परिवर्तित करते हुए अपनी पत्नी और बेटी को अपने नए वरदान के बारे में बताने के लिए घर की ओर भागा। घर पहुँचते ही, उसकी बेटी उसका स्वागत करने के लिए दौड़ती हुई बाहर आई, जैसे ही उसे अपनी गोद में लेने के लिए वह आदमी नीचे झुका, उसकी बेटी सोने की मूर्ति में परिवर्तित हो गई।उसे अपनी मूर्खता का एहसास हुआ और उसने अपने जीवन के बाकी दिन, उसका वरदान वापस लेने के लिए, परी की तलाश में बिता दिए।

कहानी से मिली सीखः लालच बुरी बला है।

चींटी और टिड्डा

दो जिगरी दोस्त हुआ करते थे – एक चींटी और एक टिड्डा। टिड्डे को पूरे दिन आराम करना और अपना गिटार बजाना पसंद था परंतु चींटी पूरे दिन कड़ी मेहनत करती थी। जिस समय वह बगीचे के सभी कोनों से खाना इकट्ठा करती थी तब टिड्डा या तो आराम करता या अपना गिटार बजता रहता, या सोता रहता था। टिड्डा, चींटी को हर दिन थोड़ा आराम करने के लिए कहता था, लेकिन चींटी मना कर देती थी और अपना काम जारी रखती थी। जल्द ही, सर्दी का मौसम आया और दिन में व रात में ठंड बहुत बढ़ गई। ऐसे में बहुत कम प्राणी बाहर जाते थे, अब टिड्डे के लिए खाना जुटाना मुश्किल हो गया और वह भूख से बेहाल हो गया। लेकिन, चींटी के पास सर्दियों में बिना किसी चिंता के रहने के लिए पर्याप्त खाना था।

कहानी से मिली सीखः उचित समय पर कार्य करना ही कल आपके काम आएगा।

घमंडी गुलाब

एक बार एक गुलाब था जिसे अपनी सुंदरता पर बहुत गर्व था, वह सिर्फ़ एक बात से निराश था कि वह एक कैक्टस के बगल में उगा था। हर दिन, गुलाब कैक्टस के रूप को लेकर उसका तिरस्कार करता था, लेकिन कैक्टस हमेशा शांत ही रहता था। बगीचे के अन्य सभी पौधों ने गुलाब को समझाने की बहुत कोशिश की, लेकिन उसे तो अपनी ही सुंदरता पर बहुत घमंड था।

गर्मियों के मौसम में बगीचे के बीचों–बीच मौजूद एक कुआँ सूख गया और पौधों को देने के लिए बिलकुल भी पानी नहीं बचा था। गुलाब मुरझाने लगा, उसने देखा कि एक चिड़िया कैक्टस में अपनी चोंच डालकर पानी पी रही थी। हालांकि गुलाब शर्मिंदा था, उसने फिर भी कैक्टस से थोड़े पानी के लिए पूछा। दयालु कैक्टस तुरंत मान गया और दोनों ने दोस्त बनकर गर्मी के इस कठिन परिस्थिति का मिलकर सामना किया।

कहानी से मिली सीखः कभी किसी भी व्यक्ति की उसके रूप के आधार पर राय नहीं बनानी चाहिए।

KIDS corner

नन्ही कूची

बच्चों ने पेंटिंग्स के जरिए आंखें खोलने की कोशिश की

Aparna Singh
Class 9th,
Central School, IIM Road,
Lucknow

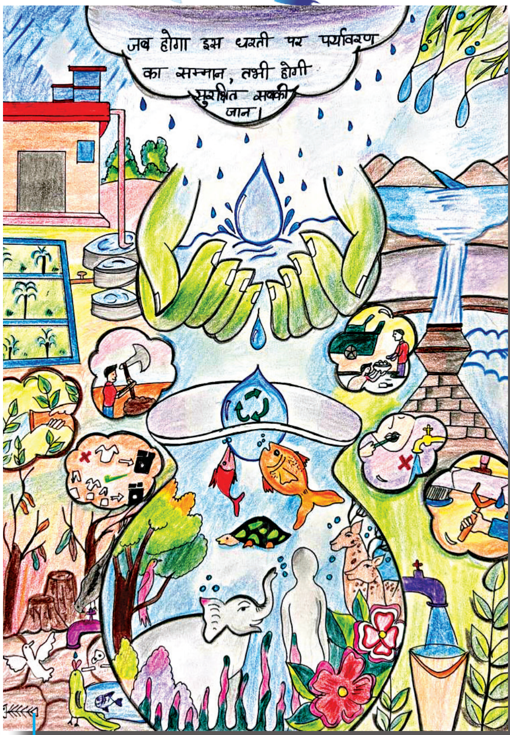

Shreya Pathak
Class 11, Section- B,
Rani Laxmi Bai Memorial School,
Chinhat, Lucknow

Aadya Singh
7 B, Jagran Public School,
Gomti Nagar, Lucknow

क्विज कार्नर

प्रश्न-1. जलवायु परिवर्तन पर अंतरराष्ट्रीय सम्मेलन कॉप-29 का आयोजन हाल ही में किस स्थान पर हुआ है?

ए. मुल्तान (अफगानिस्तान) **सी.** बाकू (अजरबैजान)

बी. कोलंबो (श्रीलंका) **डी.** पेरिस (फ्रांस)

प्रश्न-2. पिछले केंद्रीय मंत्रिपरिषद विस्तार में किस नेता को पर्यावरण, वन और जलवायु परिवर्तन विभाग में राज्यमंत्री बनाया गया है?

ए. रघुवर दास **सी.** अनुप्रिया पटेल

बी. गजेंद्र शेखावत **डी.** कीर्तिवर्धन सिंह

प्रश्न-3. इनमें से कौन-सा जीव सरीसृप श्रेणी (रेप्टाइल) से संबंध रखता है?

ए. गिरगिट **सी.** हारिल

बी. शेर **डी.** ऊदबिलाव

प्रश्न-4. वैज्ञानिक एवं औद्योगिक अनुसंधान परिषद (सीएसआईआर) का संस्थापक महानिदेशक निम्न में से कौन था?

ए. डॉ. होमी जहांगीर भाभा **सी.** टीएन खुशू

बी. डॉ. शांति स्वरूप भटनागर **डी.** डॉ. चंद्रशेखर वेंकटरमन

प्रश्न-5. भारतीय अंतरिक्ष कार्यक्रम का पिता किस महान वैज्ञानिक को कहा जाता है?

ए. डॉ. विक्रम साराभाई **सी.** प्रो. एमजीके मेनन

बी. डॉ. मोक्षगुंडम विश्वेसरैय्या **डी.** प्रो. एमएस स्वामीनाथन

प्रश्न-6. निम्न में से कौन-सा वैज्ञानिक केंद्र सरकार में मंत्री भी रहा है?

ए. डॉ. प्रफुल्ल चंद्र राय **सी.** डॉ. राजा रमण्णा

बी. डॉ. विक्रम साराभाई **डी.** डॉ. एपीजे अब्दुल कलाम

प्रश्न-7. प्रख्यात पुरावनस्पति वैज्ञानिक डॉ. बीरबल साहनी के नाम पर प्रसिद्ध अंतरराष्ट्रीय संस्थान भारत के किस शहर में स्थित है?

ए. नई दिल्ली **सी.** लखनऊ

बी. कोयंबटूर **डी.** मैसूर

प्रश्न-8. भारतीय वैज्ञानिकों की शीर्ष संस्था भारतीय विज्ञान कांग्रेस का वार्षिक अधिवेशन हर साल कब होता है?

ए. अगस्त के दूसरे हफ्ते में **सी.** मध्य फरवरी में

बी. जनवरी के पहले हफ्ते में **डी.** अप्रैल के पहले हफ्ते में

प्रश्न-9. भारतीय विज्ञान दिवस निम्न में से कब मनाया जाता है?

ए. 17 जनवरी **सी.** 25 दिसंबर

बी. 10 मार्च **डी.** 28 फरवरी

प्रश्न-10. मानव शरीर में निम्न में से क्या अधिक बनने से यूरिक एसिड बढ़ता है?

ए. कैल्शियम **सी.** कोलेस्ट्राल

बी. प्रोटीन **डी.** प्यूरीन

प्रश्न-11. स्वीडन की ग्रेटा थुनबर्ग का संबंध निम्न में से किस क्षेत्र से है?

ए. जलवायु परिवर्तन **सी.** वर्णसंकर बीजों का विरोध

बी. ऊंचे बांधों का विरोध **डी.** नदी सफाई

प्रश्न-12. दुनिया के किस देश में केसर का उत्पादन सबसे अधिक होता है?

ए. तुर्किए **सी.** ईरान

बी. पाकिस्तान **डी.** सीरिया

प्रश्न-13. प्रसिद्ध फ्रांसीसी वैज्ञानिक लुई पाश्चर निम्न में से किस क्षेत्र से संबंधित थे?

ए. गणित **सी.** रसायनशास्त्र

बी. पादपविज्ञान **डी.** खगोल विज्ञान

प्रश्न-14. देश में सबसे अधिक चीनी मिलें किस राज्य में हैं ?

ए. उत्तर प्रदेश **सी.** कर्नाटक

बी. मध्य प्रदेश **डी.** महाराष्ट्र

प्रश्न-15. पौराणिक मान्यताओं के अनुसार हमारा राष्ट्रीय पक्षी मोर निम्न में से किस देवता का वाहन है?

ए. इंद्र **सी.** गणेश

बी. शंकर **डी.** कार्तिकेय

प्रश्न-16. दुनिया के किस देश में सबसे अधिक मीठे पानी का भंडार है?

ए. अमेरिका **सी.** भारत

बी. ब्राजील **डी.** रूस

प्रश्न-17. भाखड़ा बांध निम्न में से किस नदी पर बना है ?

ए. सतलुज **सी.** यमुना

बी. हुगली **डी.** कावेरी

प्रश्न-18. प्रख्यात पर्यावरणविद डॉ. वंदना शिवा का संबंध निम्न में से किस राज्य से है ?

ए. आंध्र प्रदेश **सी.** कर्नाटक

बी. केरल **डी.** उत्तराखंड

उत्तर:	4. बी	8. बी	12. सी	16. बी
1. सी	5. ए	9. डी	13. सी	17. ए
2. डी	6. सी	10. डी	14. बी	18. डी
3. ए	7. सी	11. ए	15. डी	

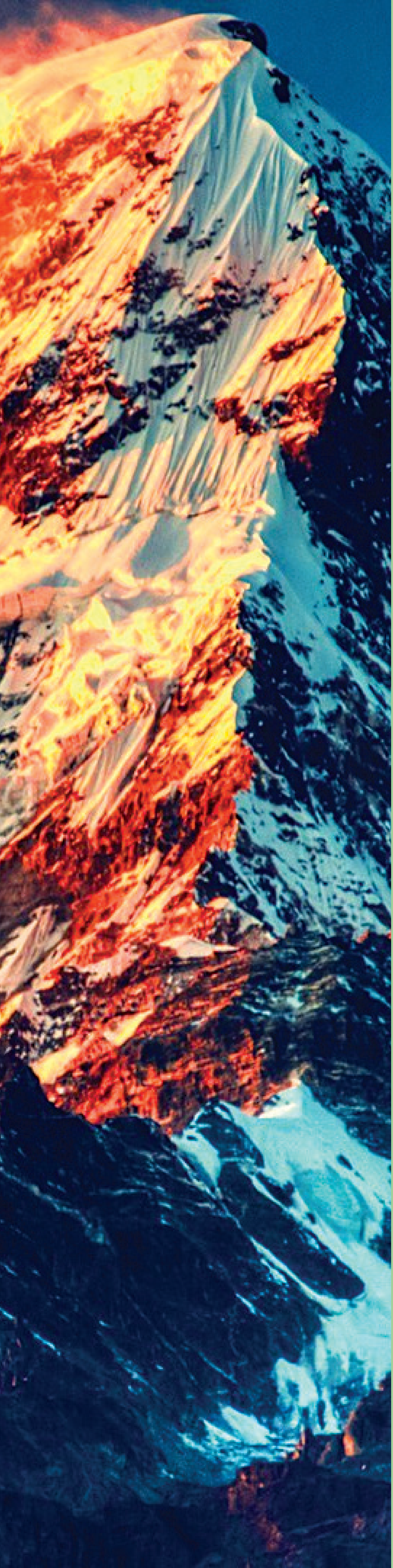

THE HIMALAYAN BLUNDER

● UMA SHANKER SINGH, IFS, DSc

The Indian Himalayan Range (IHR), comprising 11 States and two Union Territories, had a decadal urban growth rate of more than 40% from 2011 to 2021. Towns have expanded, and more urban settlements are developing unsustainably. Almost all Himalayan towns, including State capitals, struggle with managing civic issues. For example, cities like Dehradun, Nainital, Srinagar, Guwahati, Shillong, and Shimla, as well as smaller towns, face significant challenges in managing sanitation, solid and liquid waste, and water. City governments are short of human resources by almost 75% and beset with rampant corruption. Cities continue to expand into the peripheries, encroaching on the commons of villages. Srinagar and Guwahati are examples of such expansion, leading to the plundering of open spaces, forest land, and watersheds. In Srinagar, land use changes between 2000 and 2020 showed a 75.58% increase. Water bodies have eroded by almost 25%, from 19.36 square kilometres to 14.44 square kilometres.

These areas have been taken over by built-up real estate, increasing from 34.53 square kilometres to 60.63 square kilometres, a rise from 13.35% to 23.44% of the total municipal area. Nearly 90% of the liquid waste enters water bodies without treatment. Over the past few decades, tourism in the IHR has continued to expand and diversify, with an anticipated average annual growth rate of 7.9% from 2013 to 2023. Current tourism in the IHR often replaces eco-friendly infrastructure with inappropriate, unsightly, and dangerous constructions, poorly designed roads, and inadequate solid waste management, which leads to loss of natural resources damaging biodiversity and ecosystem services. The high costs of urban services and the lack of corridors place these towns in a unique financial situation. Current intergovernmental transfers from the centre to urban local bodies constitute a mere 0.5% of GDP; this should be increased to at least 1% of the GDP. Uttarakhand and Himachal Pradesh in the Himalayan region are extremely eco-sensitive, hundreds of people lose their lives due to landslides along with destruction worth crores of rupees.

The hill states are very vulnerable

for example, the total area of 55,673 square kilometres of Himachal Pradesh, 38,249 sq.km area comes under high risk and 4,461 square km area comes under very high-risk area for landslides. The number of landslides has increased wildly on account of road construction in the hill states.

More than 80 thousand trees have been cut for the highways in Himachal Pradesh and it has led to the reduction in carrying capacity of the area on account of the increasing construction in the tourism sector.

A 115,000-megawatt power project has been planned in the Himalayan region, extending from Jammu and Kashmir to Arunachal Pradesh and for the restoration of the ecosystem all such plans needs to be dropped immediately. Due to the impact of these power projects, cracks have appeared in people's houses, there has been an increase in natural calamities and water sources have dried up. Urni village in Kinnaur has been sinking continuously since 2009 and its cracks are increasing year by year and the village was hit by a landslide also in December 2022. Both Sikkim and Joshimath are located in the eastern Himalayas and are facing the same challenges and predicaments, Sikkim has been witnessing this hazard for the past one decade. Sikkim is also facing the problems in places like Dikchu, Shipgyer, Ramam in North Sikkim because of tunnels and the National Hydroelectric Power Corporation projects. The area is facing environmental disasters affecting the indigenous community of the region at large and loss of properties equally. Hydel projects, which commenced in the late 1990s in the state, can also be held accountable for the disasters, the expert said. They have affected the main Teesta river basin, where 90 per cent of Sikkim's landmass is dependent hence, due to the construction of a bumper dam on Teesta river, people are facing multiple

More than 80 thousand trees have been cut for the highways in Himachal Pradesh and it has led to the reduction in carrying capacity of the area on account of the increasing construction in the tourism sector.

land erosion in every part of Sikkim and also parts of Siliguri. Similarly, in Uttrakhand Himalayas some 7,000 MW of hydroelectric projects are either operating or being constructed in this fragile region; back to back; with no respect for the river or its need to flow naturally.

The issue is not about hydropower generation or the need for energy or development. It is about the carrying capacity of this fragile region, which is even more at risk because of climate change. This needs to be assessed, but by keeping the river first and our needs next. Otherwise, the river will continue to teach us bitter lessons; it will be the revenge and rage of nature. Humans will be shown as the puny things we are. Apart from the dams, numerous pharmaceutical companies and rampant unnecessary road widening, smart city projects and congested urban planning are putting more pressure on the ecology leading to environmental disasters.

Joshimath, a key transit point for tourists traveling to Badrinath and Hemkund Sahib, situated at an altitude of 1,890 metres from sea level in the Garhwal Himalayas, has a population of over 20,000. It is located on the Rishikesh-Badrinath National Highway (NH-7) of Chamoli district which falls in Zone V of the Seismic Zonation map and almost sits on the tectonic fault line of Vaikrita Thrust (VT). What really made things worse is the weak foundation of the city. Sitting atop a glacial moraine, which are distinct ridges or mounds of debris that are laid down by a glacier, the town's foundation has no solid rocks.

These sediments have voids, making them extremely unstable, geologically. Spread over an area of 2,458 square kilometres, Joshimath is one of the 12 tehsils in Uttarakhand's Chamoli district. Previously, many incidents like landslides, subsidence or sinking and flash flood occurred in and around Joshimath city and multiple major and minor cracks also exposed on roads, walls and floors of houses.

From 11 January 2023, major portion of Joshimath city started to sink continuously and major and minor cracks began to appear on roads, floors, ceilings and walls of houses. Around 1000 people have been evacuated from the unsafe area and risky buildings (Biswajit et al., 2023). The place was sitting atop with a disaster of this magnitude waiting to happen, but administration could not assess it. The Joshimath town is situated along a narrow gorge at the confluence of two major rivers; Dhauliganga and Alaknanda and is close to the Main Central Thrust (MCT) fault passing through on the southern side of town. So, it is prone to earthquake and also frequent rainfall. (Yaspal Sundriyal et al., 2023). The reactivation of these fault lines nearly 50-60 kilometres under the surface remains a big mystery. There are many contributory factors leading to the imbalance in the hill ecosystem but chiefly among them are the rapid rise in construction activities, widening of the Char Dham Yatra road and the National Highway 7, which runs through the town taking tourists and cargo to the holy shrine of Badrinath

every year. Joshimath's problems with slope instability have gotten worse as a result of unplanned construction that didn't take bearing capacity into account (USDMA, 2022). The widening of the road brought more and more hotels springing up in and around Joshimath therefore, religious tourism also spiked.

Prime minister's visit to Kedarnath and Badrinath joined a record number of 41 lakh pilgrims that thronged the shrine thereby, causing an immense pressure on the natural resources which was unsustainable at any point of time. The roads in the geologically sensitive region should have been five metres wide, but the government widened the roads to 12 metres in a complete disregard to the Ravi Chopra committee recommendations. This led to not only cutting around 50000 trees but also more and more cleaning of the hills. This made the already ecologically sensitive region highly vulnerable to landslides as the top layer was cleaned for the road construction. Another factor which was extremely important in destroying the local hill ecosystem was the establishment of Tapovan - Vishnugad hydel project which mandated NTPC to carve out a 12-kilometre tunnel puncturing some of the acquirers in the process. However, due to the unavailability of solid rocks underneath, the water released from the acquirers seeped into the soil and loosened it from within. With the top surface of the soil already gone due to intense construction, the region stood on the edge and sunk as the time passed on. That is not all. In the last decade, the ridge that houses Joshimath has been traversed by running streams with a high gradient from Vishnuprayag, a confluence of the Dhauliganga and the Alaknanda rivers. The confluence has survived two big glacial and cloud outbursts that deposited heavy sediments causing major erosion in the region. The outbursts brought debris worth 10,000 houses in one day, which made things worse for Joshimath.

Tourism can lead to various environmental problems, such as water pollution, solid waste generation, and depletion of natural resources.Therefore, it is important to find a balance between tourism development and environmental conservation by adopting sustainable tourism practices. Many studies have raised concerns regarding the state's capacity to accommodate tourists sustainably, with estimates suggesting that the maximum capacity of Uttarakhand lies between four and five crore tourists per year. According to the data released by the Uttarakhand government, the state has witnessed a surge in tourism, with 3.2 crore tourists visiting in 2019,

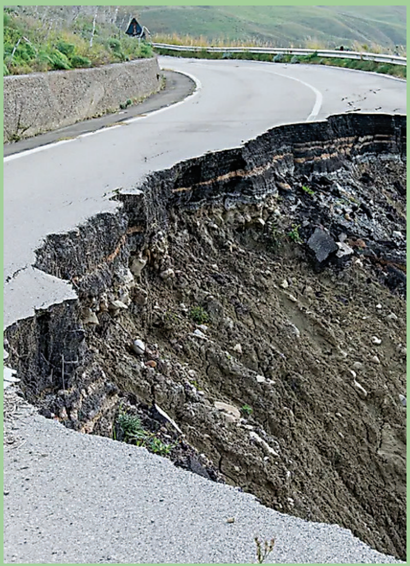

as compared to 2.85 crore tourists in 2018 (Uttarakhand Tourism, 2021). However, increasing visitors have posed several challenges to the state's infrastructure, transportation, and environment. The sinking of Joshimath has highlighted the issue of infrastructure development and its impact on the environment, in Uttarakhand. A study by (Pandey etal, 2015) found that the tourism industry in the Himalayan region has a negative impact on the Himalayan ecosystem in terms of affecting its biodiversity, resulting in habitat fragmentation, pollution, glacier melting, soil erosion, etc.

Due to earth subsidence that caused 561 homes in Joshimath to develop cracks, the Uttarakhand government prohibited development work in the area on January 5,2023 in response to protests from the terrified inhabitants. The geological developments underway in Joshimath should be a case study for every town planner working in the hills. The factors at play in Joshimath are also found to be similar in other cities such as Nainital, Champawat, and Uttarkashi. All these cities are witnessing rampant construction, deforestation, tourist boom, and poor civic management. The only silver lining is that they are not on top of ancient glacial debris. The National Institute of Hydrology (NIH) has published a report called "Sinking Joshimath" which reveals that Restriction in the flow of water in Joshimath, Uttarakhand may have led to the major land subsidence in the region early in January,2023. The report further says that the recharge area held an estimated 10.66 million litres of water, which was emptied in approximately one month. To gather this much water, it might take approximately 12 to 15 months. While the reason for the water flow is not known, there is a possibility that it may have collected due to the blockage of a sub-surface channel and burst from a weak spot.

Although not specifically stated in the NIH document, it has been observed that Joshimath had experienced heavy rainfall, which was measured at 190 mm in 24 hours in October 2021, about 15 months before the torrential flow of water started in JP Colony. There was also flooding in the area on this day. It is feared that rainwater may have collected underground and came out the most weaker points due to the hydraulic pressure. The report explained through maps that the water channels flowing from the upper areas have disappeared in the middle.

Therefore, permanent surface channels will have to be built to dispose of water coming from the upper areas. The water requirements of local people and flora and fauna should be kept in mind before the channelization of water. Water coming from upper areas and city waste should be disposed of safely.

Opinion

Indifferent courts With regards to the situation worsening in Joshimath, local organisations and people approached the Supreme Court on January 10.

The Supreme Court dismissed the petition saying that the Uttarakhand High Court is already hearing the matter related to the incident in question and the petitioner should approach the High Court. Earlier, following the Chamoli floods in 2021, which claimed nearly 200 lives and caused extensive damage to the Tapovan power project, five residents of Chamoli petitioned the Uttarakhand High Court to cancel the environmental clearance granted to the Tapovan-Vishnugad and Rishi Ganga projects and compensate the local people for the damage they suffered. The court not only dismissed this public interest litigation (PIL) but also imposed a fine of 10,000 rupees each on the fivepetitioners.

The most recent census survey for Joshimath town was conducted in 2011, revealing that the town is divided into nine wards. According to the survey, the total population of Joshimath Nagar Palika Parishad was 16,709, with 9988 males and 6721 females, as reported by Census India in 2011. However, recent census data is not available but the population has gone up multiple times. Population and unplanned growth have led to irreparable damage to the ecosystem. In 2006, the number of buildings in Joshimath town was 2456, covering a corresponding area of 4,66,438 sq. meters, and in 2023, the number of buildings in Joshimath town increased to 5113, covering a corresponding area of 8,98,843 sq. meters. Construction in a mountainous region can be challenging due to the rugged terrain and hazard risk, which emphasizes the need to consider factors such as slope stability, erosion, and the impact of natural disasters such as earthquakes and landslides before planning permanent structures. Any country who does not learn a lesson from its own mistake gets obliterated. A study was carried out to understand the deformities occurring in the year 2016-17, 2018-19, 2020-21 and 2021-23. The results revealed that the Joshimath region experienced the highest land deformation during the year 2022–2023. During this period, the maximum land subsidence was observed in the north-western part of the town. The maximum Line of sight (LOS) land deformation velocity +60.45 mm/year to + 94.46 mm/year (2022–2023), occurred around Singhdwar, whereas the north and central region of the Joshimath town experienced moderate to high subsidence of the order of +10.45 mm/year to + 60.45 mm/year (2022–2023), whereas the south-west part experienced an expansion of the order of 84.65 mm/year to 13.13 mm/ year (2022–2023). Towards the south-east, the town experienced rapid land subsidence, 13.13 mm/ year to 5 mm/ year (2022–2023).

The issue is not about hydropower generation or the need for energy or development. It is about the carrying capacity of this fragile region, which is even more at risk because of climate change. This needs to be assessed, but by keeping the river first and our needs next.

Institutions implementing projects in border areas were, thus, exempted from the requirement of Environment Clearance (EC) subject to a specific SOP therefore, the path was cleared for the Char Dham highway project. The subsidence in Joshimath was so severe that it sank at a pace of 5.4 cm in just 12 days between 27th December 2022 and 8th January 2023 (ISRO report 2023). The study of rocks in the Char Dham Highway project where blasting was undertaken shows that the project is responsible for many of the landslides that have been occurring in the recent past. Tota Ghati is a location in Joshimath, Uttarakhand, where there have been landslides and other issues with the road.

Many other regions in the Himalayas and around the world face comparable environmental and geological challenges because of rapid human development. Therefore, a concerted effort is required to address these issues and promote sustainable development practices that place a premium on environmental preservation. Joshimath's future depends on the implementation of effective measures to mitigate environmental and geological hazards. Future imperatives include prioritizing sustainable development practices and implementing policies that account for the region's fragile geological and environmental conditions. The growth of the town should be regulated, and large infrastructure projects should be carefully planned and implemented. Large infrastructure and hydropower projects should be evaluated carefully to ensure that they do not exacerbate existing environmental issues. To prevent further land subsidence, the government should work towards developing an effective drainage system and waste management system while preserving the region's natural resources and considering the region's fragile geological and environmental conditions when planning and executing development projects. The vulnerability of the region to natural disasters such as earthquakes and landslides must be addressed, and precautions must be taken to protect the local population. In addition, the government should invest in the development of alternative industries, such as ecotourism and sustainable agriculture, to reduce the region's dependence on the hotel and tourism industries, which have contributed to land degradation. To ensure the long-term prosperity and well-being of the region, a cautious and sustainable approach is required overall.

(Writer is an Indian Forest Service (IFS) officer. views are personal.)

There are many things you can live without. Water is not one of the them.

save water, save future.

Issued by Sawen Prayawaran Chetna Federation, Lucknow

spcflucknow@gmail.com

Serving since 1998

SAWEN GROUP

Sawen Consultancy Services Pvt. Ltd
Sawen Projects & Laboratories Pvt. Ltd.
Water & Environment Pollution Control Group
Sawen Paryawaran Chetna Federation

Dedicated to Environment Clean & Green

Major Clients

Presence: PAN INDIA
Abroad: Indonesia & Turkey

Contact Us

Head Office: 417 A&B, 409 A, 4th Floor,125 Ground floor, Sahara Shopping Centre, Faizabad Road, Lucknow - 226016 (U.P.)

Laboratories Address: Hall No. 2,7 & 10, LDA Commercial Complex Vibhav Khand, Gomti Nagar Lucknow 226010 (U.P.)

Branch Office: Bhopal-Shop No. 13, 1st floor, Sarvoday Shopping Centre, Arvind Vihar, Baghmughaliya, Bhopal- 462043(M.P.)

Branch Office: Noida- Flat no. M-403, 4th Floor, Tower-M, Homes 121, Plot no. GH-01, Sec-121, Noida **(U.P.)**

Contact No.:
7379444471, 72, 73

Email:
consultancy_sawens@yahoo.co.in,
splpl.lko@gmail.com,
consultancy.sawens@gmail.com,
consultancy@sawenconsultancyservices.com,
lab@sawenconsultancyservices.com,

Website:
www.sawenconsultancyservices.com

Follow us:

TOTAL ENVIRONMENTAL SERVICES

Dr. Rajesh Kumar Singh
Chairman Cum
Managing Director

About us

Sawen sustains a panel of eminent Scientist, Engineers and Technicians committed for Research and Development of Environmental viable products & Technologies for service of mankind.

Sawen provides "Total Environment Services" and promotes quality Education & Training among Environmental Professionals, Research and development for achieving vivid sustainable environment.

Recognition & Accreditations

NABET · TC-5005 · CPWD · SITP-Bhopal

Environment Vision 2030

- Proceedings towards Sustainable Development Goals (SDG)
- Sustainable use of Resources
- Achieving highest level of Environmental Performance
- Reducing Carbon Footprint
- Environment Conscious
- Help Achieves Environmental Standards through Consultancy

Dominant Sectors

- Mining of minerals including opencast only
- Mineral beneficiation
- Cement Plants
- Distilleries
- Sugar Industry
- Building and Construction projects
- Township and Area development projects

OUR SERVICES

- Environment Impact Assessment Studies (EIA)
- Environment Clearance CTE/CTO from SPCB
- NOC from Central Ground Water Board
- NOC from Forest Department
- Environment Management Plan (EMP)
- Environment Social Governance
- Environment Statements/Audits/Budgeting
- Environment Education & Training
- Preparation of detailed Project report on pollution control system
- Risk Assessment and Disaster Management
- All type of waste Management System,
- On-site Emergency Plan
- Socio-Economic & Biodiversity Studies
- Micro Metrology Studies
- Performance Evaluation Study of Pollution Control system
- Prefeasibility Studies & Carbon Crediting
- Environment & Social Impact Assessment (ESIA)
- Cost Benefit Analysis & Environment Budgeting
- Wetland approval from Authority

STP's, ETP's, WTP's & APCS

LABORATORY

PROJECTS

- Design, Engineering, Construction, Supply, Erection, Commissioning and Training of STP's, ETP's, WTP's FSTP's (MBBR, SBR, MBR SAFF, ASP, ZLD & Wetland etc. Technology) & APCS
- Operation maintenance & Quality Control of ETP's, STP's, & WTP's FSTP's on Annual Contract basis
- Troubleshooting & Modification of ETP's, STP's WTP', FSTP's & APCS
- Commissioning of Pollution Control Systems.

READY TO USE

- Soil & Water Testing Kit
- Mobile Sawen Soil Testing Kit for determination of pH, N, P & K levels
- Media & Bio culture
- PCC Reactor

LABORATORY TESTING

- Environment: Effluent, Sewage, Ground water, Surface water, Indoor & Outdoor swimming pool, Air, Chimney & Vent Fugitive emission, Vent Emission work zone & indoor area, Ambient Noise Source noise, Liquid waste/ slurry/ Sludge Leachate, Municipal solid waste, Soil, Sediments, Used waste oil, Construction water, Drinking water, Industrial water, Irrigational water
- Food safety: Beverages, Canned & Processed food, Fruit and Fruit products, Milk & Dairy Products.
- Biological Testing: Pathogens- Total Coliform, Salmonella, E. coli, Shigella, Vibrio, Yeast & Mould, Staphylococcus, Bacillus.